चन्दामामा
5

Photo by Hasam Vaidya

पुरस्कृत परिचयोक्ति

गिर न जाय...

प्रेषिका :

नवम्बर १९५७

विषय - सूची

★

एक प्रति ७५ नये पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ६–००

अधिक खतरनाक बीमारी होनेके पहले ही बच्चे के सर्दी-जुकाम को दूर कीजिये

रातोरात इस गुणकारी प्रसिद्ध औषधि द्वारा-उसके गले, नाक व छाती के दर्द का अन्त कीजिये।

जब भी बच्चे को सर्दी-जुकाम हो जाय तब जरा भी देर न कीजिये . . . सोते समय उस की छाती, गले व पीठ पर विक्स-वेपोरब मल दीजिये। बच्चा, सर्दी जुकाम की तकलीफों से जहाँ दर्द हो रहा है, आराम पायेगा और रात ही रातमें, जब आपका बच्चा सुख की नींद सोयेगा, विक्स वेपोरब उसे सर्दी-जुकाम से छुटकारा दिलायेगा। सुबह होने तक बच्चा स्वस्थ हो जायगा।

२ तरह से आराम पहुंचाता है

१ यह नाक के जरिए असर करता है

विक्स वेपोरब की तेज औषधीय भाप सूंघने से आपके बच्चे के नाक व गले के सर्दी-जुकाम के विकार मिट जाते हैं।

२ यह त्वचा के जरिए असर करता है

आपके बच्चे की छाती में दर्द भी नहीं रहता क्योंकि विक्स वेपोरब त्वचा के जरिए पुलटिस जैसी गर्मी पहुंचाता है।

आज ही विक्स वेपोरब का इस्तेमाल कीजिये।

नयी कम कीमत डिबिया की कीमत सिर्फ ४० नये पैसे + टैक्स

जमशेदपुर
होकर
टाटा स्टील
टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड

जिनमें कला की प्रतिभा होती है, वे जीवन की उत्तम वस्तुओं की अधिक प्रशंसा करते हैं। आधुनिक बिस्कुट निर्माण की कला का, पार्ले ग्लूको बिस्कुट द्वारा अभ्यास किया जाता है। अधिक

पार्ले प्राडक्ट्स मैन्युफेक्चरिंग कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड

"मैं देखती हूँ, आपके कपड़ों के लिए भी टिनोपाल का इस्तेमाल किया गया है।"

सफ़ेद कपड़ों को चमकदार और अधिक सफ़ेद बनाने का सच्चा तरीका है-टिनोपाल। थोड़ासा टिनोपाल बहुत समय तक चलता है और एक बार प्रयोग करने से तीन चार बार की धुलाई हो जाती है।

टिनोपाल

सुहृद् गायगी ट्रेडिंग प्रायवेट लिमिटेड
पो. ऑ. बक्स ९६५, बम्बई

यह फोटोग्राफ़ प्राणलाल के. पटेल, A·R·P·S· द्वारा गेवापान ३२ पर लिया गया है ।

भविष्य के नागरिक

यह एक ऐसा चित्र है जो हिन्दुस्तान और उसके बच्चों की कहानी बताता है। कल्पना कीजिये कि उन चित्रों को देखकर कितने आनन्दित होंगे जो आप अपने ज़ीज़ आइकन कैमरा से लेंगे। आप गल्ती नहीं कर सकते यदि आप " ज़ीज़ आइकन " कैमरा चुनेंगे। यह संसार का सबसे अच्छा कैमरा है। यह याद रखिये ब्लैक एण्ड व्हाइट, कलर फ़ोटोग्राफी के लिए गेवार्ट से अच्छी फिल्म नहीं है।—क्योंकि ज़ीज़ आइकन, और गेवार्ट, फ़ोटोग्राफी की मान्यता स्थापित करते हैं।

फ़ोन्टाफ़्लैक्स

एक लैन्सवाला, मिरर रिफ्लैक्स, मिनेचर कैमरा, अच्छी व्यू फाइन्डरवाला। जी... टैसर फ. २.८, परिवर्तन योग्य लैन्स, फ्र... एलिमेन्ट, बोयोनेट, के स्थान पर टैलिफो... वाइड-एन्गल और स्टीरो लगाया जा सकता है। साइन्क्रो काम्पर शटर सेल्फ टाइमर अन्तर्निर्मित एक्पोजर मीटरे, आदि ... साथ बना है।

ALLIED PHOTOGRAPHICS PRIVATE LIMITED

अच्छे नतीजे के लिए कोई भी कैमरा हो, गेवापान, गेवाकलर फ़िल्म, और गेवार्ट फोटोग्राफिक कागज़ को ही चुनिये।

अलाइड फ़ोटोग्राफिक्स प्राइवेट लि०, कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी ताता रोड, बम्बई -

छोटी एजन्सियों की योजना

*

'चन्दामामा' रोचक कहानियों की मासिक पत्रिका है।

अगर आपके गाँव में एजेन्ट नहीं है, तो शीघ्र रु. २) भेज दीजिए। आपको चन्दामामा की ८ प्रतियाँ मिलेंगी, जिनको बेचने से रु. १) का नफ़ा रहेगा।

लिखिए :

चन्दामामा प्रकाशन

वड़पलनी :: मद्रास-२६.

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा"

एक सुन्दर साड़ी जिसकी सुन्दरता हमेशा क़ायम रहती है !

बिन्नी की बनी शुद्ध रेशम की जॉर्जेट साड़ी में आप कितनी सुन्दर लगती हैं! इन साड़ियों की सुन्दरता और मुलायमियत बरसों तक ज्यों की त्यों क़ायम रहती है; क्योंकि ये शुद्ध रेशम की होती हैं।

बिन्नी की शुद्ध रेशम की जॉर्जेट साड़ियाँ घर पर ही धोयी जा सकती हैं... न तो इनकी सुन्दरता में कोई फ़र्क आयगा और न इनके बढ़िया रंग ही फीके पड़ेंगे।

दीर्घकालीन सुन्दरता के लिए बिन्नी की रेशमी जॉर्जेट साड़ी ही लीजिए!

बिन्नी की अन्य सुन्दर रेशमी साड़ियाँ

<u>मुलायम रेशम की साड़ियाँ</u>: निहायत मुलायम रेशम की साड़ियाँ जो आकर्षक रंगों, बिलकुल नये ढंग की सुनहरी किनारियों सहित तथा तरह-तरह के बढ़िया डिज़ाइनों में मिलती हैं। घर पर ही धोई जा सकती हैं।

<u>क्रेप रेशम की साड़ियाँ</u>: ये शुद्ध रेशम की साड़ियाँ बिलकुल नये प्रकार की हैं और पहनने में बहुत ही सुन्दर रहती हैं। ये सुन्दर डिज़ाइन की सुनहरी किनारियों के साथ मिलती हैं।

बिन्नी की सभी असली साड़ियों पर इस तरह की सुनहरी छाप बनी रहती है।

दी बंगलोर वुलन, कॉटन एण्ड सिल्क मिल्स कंपनी लिमिटेड
एजेण्ट्स, सेक्रेटरीज़ और ट्रेजरर्स:
बिन्नी एण्ड कंपनी (मद्रास) लिमिटेड

BY. 3120 a (R)

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हमें "चन्दामामा" का दीपावली विशेषांक आपके समक्ष प्रस्तुत करते प्रसन्नता होती है।

प्रति वर्ष की तरह, इस वर्ष भी, विशेष सामग्री व रोचक चित्रों के साथ यह प्रकाशित किया गया है। दीपावली अंक "चन्दामामा" की वार्षिक उपहार-सा हो गया है। हम इसे कई वर्षों से प्रकाशित कर रहे हैं।

प्रति वर्ष, दीपावली अंक को पाठक बड़े चाव से पढ़ते हैं और इस अंक की माँग इतनी बढ़ जाती है कि प्रकाशकों के लिए उसे पूरा करना मुश्किल हो जाता है।

हम आशा करते हैं कि यह दीपावली अंक, पाठकों को सन्तुष्ट कर सकेगा और उनकी प्रशंसा का अधिकारी हो सकेगा।

वर्ष : ९ नवम्बर १९५७ अंक : ३

दीपों का त्योहार

श्री अशोक, बी. ए.

एक बालिका—दीपों का त्योहार दिवाली
एक बालक—दीपों का त्योहार।
सब एक साथ—दीप जलाकर जगमग कर दें
घर-आँगन और द्वार।
दीपों का त्योहार दिवाली-
दीपों का त्योहार॥

[एक बालिका का आलाप]

एक बालक—लिपे-पुते घर चमक रहे हैं।
एक बालक—चाँदी से वे दमक रहे हैं॥
एक बालक—हाट-बाट सब सजे हुए हैं।
एक बालिका—हृदय-कमल सब खिले हुए हैं॥

[एक बालक का आलाप]

एक बालिका—सजे हुए हैं रंग-बिरंगे—
घर-घर बन्दनवार।
सब एक साथ—दीपों का त्योहार दिवाली—
दीपों का त्योहार॥

[एक बालिका का आलाप]

एक बालक—जगर-मगर कर दें घर-आँगन।
एक बालिका—नाच उठे धरती का कण-कण॥
एक बालक—नये नये पकवान बनायें।
एक बालिका—जी भर खायें और खिलायें॥

[फुलझड़ियों, आतिशबाजी एवं पटाकों के छूटने की ध्वनि]

एक बालिका—भांति भांति के छोड़ पटाके
करें सभी से प्यार।
सब एक साथ—दीपों का त्योहार दिवाली—
दीपों का त्योहार॥

[संगीत द्वारा शंख, घड़ियाल आदि के बजने की ध्वनि]

तब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। बोधिसत्व उसके खजांची के रूप में पैदा हुए। वे अस्सी करोड़ के मालिक थे, पर उन्हें संसार से वैराग्य हो गया। उन्होंने राजा को अपनी सम्पत्ति देनी चाही।

"मेरे पास पैसे की कोई कमी नहीं है। इसलिए तुम अपने धन का किसी और तरह सदुपयोग करो।" राजा ने जवाब दिया। तब खजांची ने राजा की अनुमति पर काशी में अन्न दान करने के लिए छः सरायें बनवाने की व्यवस्था की। नगर के चारों फाटकों पर चार सरायें, एक नगर के बीच में, और छटी खजांची के मकान के सामने बनवाई गयीं। इन सरायों में खूब दान-धर्म किया जाता। हर रोज़, एक एक सराय पर लाख रुपये खर्च होते।

इन सरायों की व्यवस्था करने के कारण, खजांची ने मृत्यु के उपरान्त-स्वर्ग में इन्द्र का पद पाया। उनका पुत्र भी उनके पद-चिह्नों पर चलता रहा और अपने पुण्यों के कारण चन्द्र के रूप में पैदा हुआ। चन्द्र का लड़का सूर्य के रूप में पैदा हुआ। सूर्य का लड़का मातलि हुआ, और मातलि का लड़का पंचशिख हुआ। वे सब देवता हो गये।

परन्तु पंचशिख तक आते आते वंश परम्परा निर्मूल-सी हो गई। क्योंकि पंचशिख का लड़का, यद्यपि अस्सी करोड़ का मालिक था, पर बड़ा लालची था पिता के मरते ही उसने सरायें बन्द करवा दीं। उसने सराय की इमारतें भी

तहस नहस करवा दीं। उसका यह विचार था कि उसके पूर्वज मूर्ख थे।

सरायों के बन्द होते ही, नगर के भूखे-नंगे लोग पंचशिख के पुत्र के मकान के सामने रोने-चिल्लाने लगे—"महाराज! दान मत बन्द कीजिये।" परन्तु उसने अपने आदमियों से, उन याचकों को वहाँ से जबर्दस्ती हटवा दिया। फिर भिखारियों ने उसके घर की ओर आने का नाम न लिया।

वह करोड़पति था। और अपने पूर्वजों की तरह खजांची का काम भी कर रहा था। परन्तु उसने कभी भी अपने पैसे से कोई आनन्द न उठाया। कभी उसने पेट-भर न खाया। न पत्नी, बच्चों को ही खाने दिया। नमक मिर्च के साथ रूखा सूखा खाता और खट्टा मट्ठा पीकर पेट-भर लेता। मोटा कपड़ा पहिनता, एक टूटी फूटी गाड़ी में दुबला बूढ़ा बैल जोतकर इधर उधर जाया करता। ताड़ के पत्तों की छतरी का इस्तेमाल करता।

एक दिन उस कंजूस ने, महल की ओर जाते जाते सोचा कि उपकोशाधिपति को भी साथ ले जाया जाय। वह उसके घर गया। ठीक उसी समय उपकोशाधिपति उसकी पत्नी व बच्चे, पत्तों पर हलवा रखकर खा रहे थे। कोशाधिपति को देखते ही उपकोशाधिपति ने उसको भी खाने के लिए निमन्त्रित किया।

"अगर आज मैंने इसका आतिथ्य स्वीकार किया तो कल मुझे इसके सारे घर को दावत देनी होगी।" यह सोचकर उसने कहा—"मैं अभी अभी पेट भरके खाकर आया हूँ। आप खाइये।"

पर तब से उसको हलवा खाने की बड़ी इच्छा हुई। अगर घर में हलवा बनवाया गया तो उसके साथ और भी

बहुत-से लोग खायेंगे। इसलिए उसने अपनी इच्छा के बारे में किसी से कुछ न कहा। मन ही मन ललचाता रहा। फ़िक्र करता रहा और इसी फ़िक्र में उसने चारपाई पकड़ ली।

उसकी पत्नी ने आकर कहा—"क्या आपकी तबीयत ठीक नहीं है?" "तबीयत तेरी शायद ठीक नहीं है, मैं बिल्कुल ठीक हूँ।" उसने कहा। पर उसकी पत्नी ने जैसे तैसे असली बात मालूम कर ली। सब सुनकर उसने कहा—"क्या हम कोई कंगाल हैं! हलवे के लिए इतनी फ़िक्र की क्या ज़रूरत थी! काशी के सब लोगों को मैं हलवा बनवाकर खिलाऊँगी।"

"मैं जानता हूँ, तुम्हारे मायकेवाले बहुत धनी हैं। वहाँ से लाकर शहर भर को दान दो।" कंजूस खजांची ने कहा।

पत्नी ने कहा "कम से कम अपनी गलीवालों को तो बुलाओ!" "तेरा उनसे क्या मतलब!" कहा पति ने। खैर घरवालों के लिए ही तैयार करवाऊँगी।" पत्नी ने कहा। पति इसके लिए भी न माना।

"अच्छा, तो आपके लिए और मेरे लिये तैयार करूँगी।" पत्नी ने कहा।

"तू क्यों आती है बीच में!" पति ने पूछा।

"अच्छा, तो केवल आपके लिए ही बनाऊँगी, अब तो ठीक है!" पत्नी ने पूछा।

"घर में बनाने की ज़रूरत ही नहीं है।"

"थोड़ी सूजी, दूध, घी, शहद आदि मुझे दो। दो चार बर्तन भी। मैं जंगल में जाकर, बढ़िया हलवा बनाकर वहाँ खाऊँगा।" पति ने कहा।

पत्नी ने सब ज़रूरी चीज़ें दे दीं। एक गुलाम के सिर पर वह सब उठाकर,

मुँह छुपाकर, कंजूस नदी के किनारेवाले जंगल में गया। नदी के किनारे, एक पेड़ के नीचे उसने एक भट्टी बनवाई। गुलाम से ईन्धन इकट्ठा करवाया, पानी मंगवाया। और फिर उसे रास्ते पर जाकर खड़े होने के लिए कहा। "अरे, कोई रास्ते पर आ जा रहा हो तो मुझे आकर बताना। अगर मुझे तुमसे कुछ काम हुआ तो मैं बुलाऊँगा। जब तक न बुलाऊँ तब तक न आना।"

इस बीच, इन्द्र ने अपनी छठी पुश्त के कंजूस के बारे में जाना। "पंचशिख तक, सब दान-धर्म करके देवता बने, और पंचशिख का लड़का ऐसा कंजूस निकला कि उसने वंश की मान-मर्यादा मिट्टी में मिला दी और हलवा अकेला खाने के लिए जंगल में आकर भट्टी चढ़ा रहा है। अगर इसमें ज्ञानोदय न किया तो यह नरक जायेगा।" यह सोचकर, इन्द्र ने चन्द्र, सूर्य, मातलि, पंचशिख को बुलाकर उनसे सलाह मशवरा किया और उन्हें यह भी बताया कि वह क्या करने जा रहा था।

इन्द्र ने ब्राह्मण का वेश धारण किया और उस जगह गया, जहाँ कोशाधिपति हल्वा बना रहा था। उससे पूछा—"काशी का कौन-सा रास्ता है।"

"क्या तेरी अक्ल मारी गई है! काशी का रास्ता नहीं जानते! इस तरफ़ काहे को आ रहे हो! जा दूर जा।" कोशाधिपति चिल्लाया।

"क्यों चिल्लाते हो! हल्वा बना रहे हो! शायद ब्राह्मणों को भोज दोगे। मैं भी उनके साथ खाने आऊँगा।" इन्द्र ने कहा।

"भोज-वोज कुछ नहीं है, जा बे जा।" खजांची ने उसे फटकारा।

"क्यों भाई, क्यों इतना गुस्सा करते हो! अतिथि को कुछ देने से पुण्य ही होता है, पाप नहीं।" इन्द्र ने कहा।

"मैं तुझे मुट्ठी भर भी कुछ न दूँगा। यह मेरे लिए ही काफ़ी नहीं है। मैं खुद भीख माँगकर आया हूँ, और मैं अपनी भीख में से तुझे भी दूँ! वाह वाह! यह नहीं हो सकता।" खजांची ने कहा।

"थोड़ा है तो थोड़ा ही दान दो। अधिक है तो अधिक दो। अकेले कभी मत खाओ। दान करने से पुण्य होता है।" इन्द्र ने समझाया। आख़िर खजांची ने कहा—"अच्छा, तो बैठ। तुझे थोड़ा हलवा दूँगा।"

इतने में चन्द्र ने भी ब्राह्मण वेश धारण करके हलवा माँगा। खजांची को उसे भी बैठने के लिए कहना पड़ा। फिर सूर्य, मातलि, पंचशिख ने भी, ब्राह्मण वेश में आकर वहाँ धरना दिया।

जल्दी ही हलवा तैयार हो गया। "परोसूँगा, जाओ, पत्ते ले आओ।" खजांची ने कहा। ब्राह्मणों का हाथ पसारना था कि उनके हाथ में बड़े बड़े पहिये के बराबर कमल के पत्ते आ गये।

"इतने बड़े बड़े पत्तों पर मैं नहीं परोसूँगा। छोटे छोटे मन्दार के पत्ते-से ले आओ।" खजांची ने कहा। वे मन्दार के पत्ते ले आये। पर वे पत्ते भी केले के पत्ते से बड़े थे। उस पर खजांची ने हलवा परोसा। उन सबको परोसने के बाद भी, बर्तन में बहुत-सा हलवा बाकी रह गया।

इतने में पंचशिख ने कुत्ते का रूप धरकर उस बर्तन में मुख देना चाहा। ठीक समय पर खजांची ने उसे अपने हाथ से रोका, परन्तु कुत्ते ने उसके हाथ को झूटा कर दिया।

"हाथ धोने के लिए ज़रा मुझे थोड़ा पानी लाकर दो।" उसने ब्राह्मणों से कहा उन्होंने साफ़ कह दिया—"हम नहीं लाकर देंगे।"

"मेरा हल्वा खाया और इतना भी भला न करोगे।" खजांची ने कहा। तब भी वे न माने। "अच्छा, तो ज़रा मेरा बर्तन देखते रहो, मैं जाकर पानी ले आता हूँ।" कहता हुआ खजांची नदी के ओर गया। तुरत कुत्ते ने बर्तन में मुख दे दिया।

खजांची गरमा गया। ओर एक डंडा लेकर कुत्ते के पीछे भागा, परन्तु झट कुत्ता, घोड़ा बन गया और खजांची को ही भगाने लगा। वह लगातार रूप बदलता जा रहा था। कभी छोटा, कभी बड़ा। खजांची ने ब्राह्मणों से कहा—"मुझे इस घोड़े से बचाइये।"

तुरत उन्होंने अपना असली रूप दिखाया और वे हवा में उठ खड़े हुए।

"आप मनुष्य नहीं हैं। देवता हैं। आपके नाम क्या हैं, क्यों आये हैं? कृपया बताइये।" खजांची ने पूछा।

"हम तुम्हारे पितर हैं। हमने मानव जन्म लिया, परन्तु दान-धर्म के प्रभाव से हम देवता हो गये। तुम लालची होकर, वंश की परम्परा का ख्याल न करने के कारण, नरक जाओगे। तुम्हें यह सबक सिखाने के लिए ही हम यहाँ आये हैं। तुम घर जाकर हमारी तरह दान धर्म करो, और देवता बनो।"

खजांची को अक्ल आई। उसने घर जाकर अपना सर्वस्व दान कर दिया। और वह हिमालय में तपस्या करने के लिए चला गया।

[१०]

[भल्लूककेतु ने उन राक्षसों का सरदार होना स्वीकार न किया। पद्मपाद अपने देश वापिस पहुँचा। पिंगल उसके घर एक सप्ताह अतिथि रहा। फिर वह भी अपने घर गया। घर के सामने उसको अपनी माँ, रो-रोकर भीख माँगती दिखाई दी।]

पिंगल की आवाज़ सुनते ही माँ ने उसको पहिचान कर आँसू बहाते कहा—"बेटा, कितने दिनों बाद तुझे देख पायी हूँ। कहो कैसे हो? ठीक हो न?" उसे उसने गले लगा लिया। पिंगल ने उसे आश्वासन देते हुए कहा—"माँ, तेरी यह हालत क्यों हुई? मैं जाने से पहिले तुझे हज़ार मुहरें दे गया था? वे मुहरें क्या हुईं? और भाई कहाँ गये हैं?"

माँ तुरत जवाब न दे सकी। कुछ सकपकाई। उसने आँसू पोंछते हुए कहा। "तुम्हारे भाइयों के कारण ही मेरी यह हालत हुई है। तेरे जाते ही उन दोनों ने मुझे मार पीटकर मुहरें ले लीं। फिर वे अपने रास्ते चले गये।"

माँ की बात सुनकर पिंगल स्तब्ध रह गया। पर माँ को सतानेवाले अपने क्रूर भाइयों के बारे में सोचकर उसे बड़ा दुख

हुआ। उसके लिए भी यह धर्म न था कि वह अपने आप अपने भाइयों की हत्या करे।

पिंगल ने अपनी माँ को, जो सूखकर काँटा हो गयी थी, उठाकर घर की ओर ले जाते हुए कहा—"माँ, तुम्हें अब कष्ट न सहने पड़ेंगे। भगवान की कृपा से मैं सब परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुआ और कितना ही धन लेकर घर वापिस आया हूँ। आज से तेरे और मेरे कष्ट सब ख़तम हो गये हैं।" उसने अपना थैला खोला और उसमें रखे सोना, रत्न, मोती, हीरे, अपनी माँ को दिखाये।

माँ के आनन्द की सीमा न रही। उसने दोनों हाथों से मोती-हीरों को उठाकर देखते हुए कहा—"बेटा, तुम किस्मतवाले हो। इसीलिए तुम इतनी मुसीबतें झेलकर, सही सलामत घर वापिस आगये हो। मुझे भूख लग रही है। पहिले बाज़ार जाकर कुछ खाने-पीने के लिए लाओ।"

माँ की बात सुनकर पिंगल ज़ोर से हँसा। उसने दीवार के पास, उसे एक जगह बिठाया, उसके सामने पत्तल रखा; फिर अपनी जादू की थैली को उसे दिखाकर कहा—"माँ, जो तुम चाहती हो, माँगो। चावल, दाल ही नहीं, जो कोई पकवान तुम चाहो, चुटकी भर में तुम्हारे सामने ला दूँगा।"

"पिंगल, मैं तो भूख से मरी जा रही हूँ। मुझे पकवानों की क्या ज़रूरत है! पहिले बाज़ार जाकर दो-चार रोटी ले आओ। उन्हीं से मैं अपना पेट भर लूँगी।" उसकी माँ ने कहा।

पिंगल, माँ के पास बैठ गया। थैले में हाथ डालकर उसने मन्त्र पढ़े। फिर उसमें से गरमागरम रोटियाँ बाहर निकालीं।

अभी माँ हैरान ही थी कि पिंगल ने थैले में से तरह तरह के पकवान, एक एक करके, एक सौ एक निकालकर माँ के पत्तल पर, चारों ओर परोसे।

माँ आश्चर्य चकित थी। उसने सामने के पकवानों को जी भर के देखकर कहा—"बेटा, यह जादू है! क्या है! मुझे कुछ नहीं मालूम हो रहा है। इतनी छोटी थैली में इतनी सारी चीज़ें कहाँ से आगईं! और यह सब क्या है!"

पिंगल ने जादू के थैले को, तह लगाकर पास रख लिया। वह एक एक पकवान का स्वाद चखता गया। "माँ वह सब फिर कभी बताऊँगा। पहिले खाना तो खतम करो।"

थोड़ी देर में, पिंगल के साथ माँ ने भी पेट भरके खाया। पिंगल ने खाली तश्तरियों को थैले में रखकर माँ को देते हुए कहा—"माँ, आज से तुझे रसोई करने की ज़रूरत नहीं। इस थैले में एक अजीब शक्ति है। इसके प्रभाव से, हम जिस चीज़ को चाहते हुए इसमें हाथ रखते हैं, वह मिल जाती है। उस समय हमें यह मन्त्र पढ़ना होता है।" उसने माँ के कान में मन्त्र बताकर कहा—"यह रहस्य किसी को न बताना। मेरे भाइयों को भी न बताना।"

इतने में बाहर, किसी का सिर पीटकर रोना सुनाई दिया। पिंगल ने देखना चाहा कि क्या है, उसने दरवाज़ा खोला। सामने उसके दोनों भाई, जीवदत्त और लक्षदत्त, फटे, पुराने, मैले कुचले कपड़े पहिने, सूखे बाल बिखेर कर ज़ोर ज़ोर से रो रहे थे।

अपने दोनों भाइयों को उस हालत में देखकर, पिंगल का उनके प्रति भ्रातृ-प्रेम उमड़ आया। उसने उनके पास जाकर

कहा—"भाइयो! रोओ मत। भगवान की कृपा से मैं बहुत-सा रुपया कमाकर वापिस आया हूँ। हम अब आराम से रह सकते हैं।"

पिंगल के यह कहते ही, जीवदत्त और लक्षदत्त एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। तुरत जीवदत्त और ज़ोर से रोने लगा! सिर पीटकर उसने कहा—"अरे भाई पिंगल! मान लो आज से हमारी ज़िन्दगी ख़तम हो गयी। हमने माँ के साथ क्या अन्याय किया था, यह तो उसने तुझे बता ही दिया होगा। अब हम किस मुँह से इस घर में आ सकते हैं? हम इतने दिनों से तेरी राह ही देख रहे थे। तुझे एक बार देखकर उस तोते झील में मरने का निश्चय किया है। अब हम जीकर क्या करेंगे? तभी हमारे पापों का पश्चात्ताप हो सकेगा। माँ को शत शत नमस्कार! उससे कहना, वह हमारी गलतियाँ माफ़ करे। हम जाते हैं।" वह पीछे की ओर मुड़ा। उसके साथ लक्षदत्त भी चला।

पिंगल ने तुरत उछलकर उनका रास्ता रोका। "भाइयो, ठहरो। अब तुम कहाँ जा रहे हो?"

"कहाँ ! हाहा हाहा !" जीवदत्त और लक्षदत्त पागलों की तरह हँसने लगे। "भाई रास्ते से हटो। हमें अपने पापों के लिए प्रायश्चित करना ही होगा। जो माँ पर अत्याचार करते हैं, उनको वह तोता झील ही शरण दे सकती है।" कहते हुए उन्होंने आगे बढ़ना चाहा।

इतने में माँ को भी, दरवाज़े के पास अपने लड़कों को देखकर बड़ी दया आई। वह उनका किया हुआ अन्याय भूल गयी। मातृ-सुलभ प्रेम उसमें उमड़ आया। उसने पास आकर कहा—"बेटो! रोओ मत। भगवान की दया से, तुम्हारा छोटा भाई कितना ही धन कमाकर वापिस आया है। जो हो गया, सो हो गया। उसे भूल जाओ। कम से कम अब से तो आराम से ज़िन्दगी बसर करें।"

"तब हमारे पापों का कैसे प्रायश्चित्त किया जाये?" एक स्वर में जीवदत्त और लक्षदत्त ने पूछा।

"पश्चात्ताप सब पापों को हटा देता है। अब वापिस चले आओ।" पिंगल ने लक्षदत्त का हाथ पकड़कर कहा।

ने माँ और पिंगल का आलिंगन किया। "अगर खाने के लिए कुछ हो तो दो। बड़ी भूख लग रही है।"

पिंगल ने जादू की थैली ली। रसोई घर में जाकर, उसे माँ को देकर वह अपने भाइयों के पास आकर बैठ गया। दो चार मिनट बाद माँ ने तरह तरह की खाने की चीज़ें तश्तरियों में लाकर बड़े लड़कों के सामने रखीं।

जीवदत्त और लक्षदत्त नें जल्दी जल्दी कुछ खाने के बाद पूछा—"इतनी चीज़ें काहे को बनाई हैं! हम कोई अतिथि थोड़े ही हैं! फाल्तू पैसा खराब।"

पिंगल ने हँसते हुए कहा—"हम रोज़ इसी तरह का भोजन कर सकते हैं। चाहे तो हम शहर के गरीबों को भी यही भोजन बाँट सकते हैं।"

पिंगल की बात सुनते सुनते जीवदत्त ने लक्षदत्त को इशारा किया। उसने भी यह दिखाने के लिए सिर हिलाया कि वह समझ गया है।

'उस दिन रात को, भोजन के बाद, जीवदत्त और लक्षदत्त, गली में हवा खाने, टहलने निकले। वे दोनों जान गये थे कि

माँ ने भी अपने बड़े लड़कों का रास्ता रोककर कहा—"बेटो! अब अन्दर चलो। बचपन में, अगर अनजाने तुमने मेरा कुछ बिगाड़ा हो तो मैं तुम्हारी माँ हूँ, और वह भूल सकती हूँ।" कहते हुए उसने अपने दोनों लड़को के हाथ पकड़ लिये।

उसके बाद, कोसते-कुढ़ते, जीवदत्त और लक्षदत घर में घुसे। माँ ने तुरत उनके नहाने के लिए पानी लाकर रखा और पिंगल के लाये हुए कीमती कपड़ों को उन्हें पहिनने के लिए दिया। नहा-धोकर, रेशमी कपड़े पहिनकर, उन दोनों
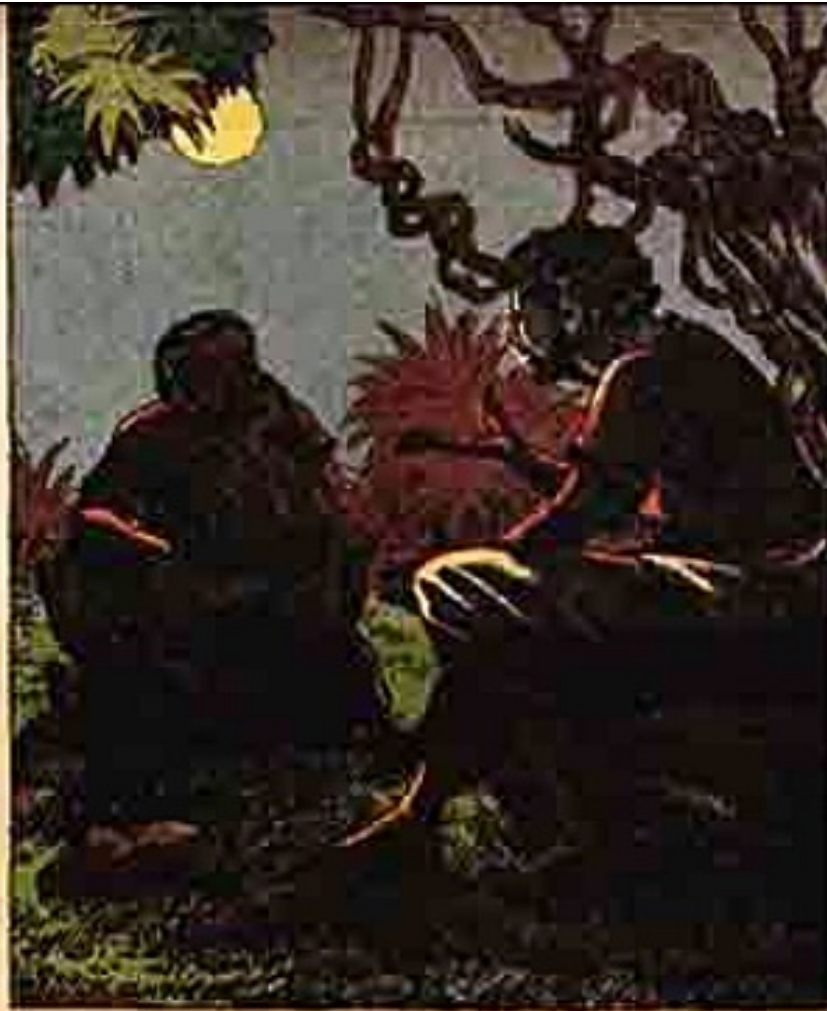
पिंगल साथ बहुत-सा धन लाया था। उस धन को कैसे लिया जाय? उनके सामने यह समस्या थी। जीवदत्त को यह भी लग रहा था, न सवेरे न शाम उसकी माँ ने रसोई की थी। उसने रसोई घर में जाकर सब कुछ देखा था। वह यह न जान सका कि बिना रसोई किये इतनी सारी चीज़ें कहाँ से आ गई थीं।

पिंगल बहुत-सा धन लाया था, इस बारे में सन्देह की कोई बात न थी। उसको पाने के लिए अभी कुछ समय लगेगा। हम पश्चात्ताप कर रहे हैं, यह माँ की तरह वह भी विश्वास कर रहा है। उस विश्वास को वैसा ही रहने दो। हमने दो बार तो दावत खा ही ली है। रसोई में चूल्हा भी नहीं जलाया गया। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है?" जीवदत्त ने पूछा।

लक्षदत्त ने आश्चर्य से सिर हिलाते हुए कहा—"अगर यह बात है तो जरूर पिंगल कोई मन्त्र सीख-साख कर आया है। और यह सब उसी मन्त्र का प्रभाव है। इसलिए उसने इतने इतमीनान से कह दिया था कि वह शहर भर के गरीबों को वह भोजन बँटवा सकता था। मौका पाकर माँ से यह भेद पूछना। वह बता देगी।"

दोनों भाइयों ने, अगले दिन, पिंगल को घर में न देख, माँ के पास जाकर यह बात पूछी। पहिले तो उसने बताने से इनकार किया। परन्तु लड़कों के बहुत पूछने पर उसने उनको थैली लाकर दिखाई और उनसे कहा कि वे वह किसी को न बतायें।

"....क्यों....वह मन्त्र क्या है? मुझे नहीं बताओगी। मैं इस समय जलेबी खाना चाहता हूँ।" जीवदत्त ने कहा।

माँ का तो बच्चों पर प्रेम होता ही है। जो मुसीबतें उन्होंने उस पर ढ़ाई थीं, वे भी भूल गई। उसने उनको मन्त्र बता दिया। उन्हीं के हाथ से उन्हीं की माँगी हुई चीज़ थैले में से निकलवाई। यह देख जीवदत्त और लक्षदत्त की खुशी का ठिकाना न रहा। उस दिन रात को, उन दोनों ने पिंगल और माँ के विरुद्ध एक साजिश की। अगर पिंगल को घर से बाहर कर दिया तो वे जानते थे कि माँ तो कुछ कर नहीं पायेगी पर पिंगल को कैसे हटाया जाय?

"कल जब मैं बाज़ार में था तो मुझे एक जहाज़ का कप्तान मिला था। उसे समुद्र में जहाज़ों को चलाने के लिए नवयुवकों की ज़रूरत है। कितना ही पैसा देकर वह घर के मुखियाओं से नवयुवकों को खरीद रहा है। हम उससे बातचीत करके, पिंगल को उसे बेच देंगे। हम ही तो इस घर के बड़े आदमी हैं।" जीवदत्त ने कहा।

"अच्छी चाल है। आओ, उस कप्तान से बातचीत कर आयें।" लक्षदत्त ने कहा। दोनों भाई मिलकर कप्तान के ठहरने की जगह गये। उसने उनकी आवभगत करके पूछा कि वे क्या चाहते थे। तब जीवदत्त ने रोनी-सी शक्ल बनाकर कहा—"कप्तान जी। हमारा एक भाई है। उसका नाम पिंगल है। वह बड़ा आवारागिर्द है। कभी घर में नहीं रहता। हमारी बूढ़ी माँ को और हमें सताकर रुपये ऐंठता रहता है। हम यह नहीं सोच पा रहे हैं कि उससे कैसे पिंड छुड़ाया जाये।

(अभी और है)

मूर्खता

केरल देश के राजा प्रसेन को बड़ी सख्त बीमारी हुई। "महाराज, जबतक आप सिर पर चकोर रखकर स्नान न करेंगे तब तक आपकी बीमारी ठीक न होगी।" राज वैद्य ने कहा।

राजा ने शिकारियों से कहा—"अरे, तुम अगर एक चकोर पक्षी पकड़ लाये तो मैं ईनाम दूँगा।" शिकारियों ने जंगल में जाल डाले। उसमें एक बगुला फंसा। बगुले को एक चकोर छुड़ाने आया और खुद फंस गया।

"मुझे छोड़ दो। मैं तुम्हें एक खजाना दिखाऊँगा।" चकोर ने शिकारियों से कहा। शिकारियों ने उसकी न सुनी और उसको ले जाकर राजा को दे दिया। राज वैद्य ने, राजा के सिर पर चकोर रखकर उसको स्नान करवाया। उसकी बीमारी ठीक हो गई। राजा ने खुशी खुशी चकोर छोड़ दिया।

पक्षी ने आकाश में उड़कर कहा—"राजा पहिले मैं अविवेकी था। मैं बगुले को छुड़ाने गया और खुद जाल में फंस गया। तेरे शिकारी भी अविवेकी हैं। उनको वह खजाना न मिल सका जिसको दिखाने का मैंने वायदा किया था। और हम सब से अधिक अविवेकी तू है। जब मेरे शरीर से लगे पानी से ही तेरी बीमारी ठीक हो गई, न मालूम तेरा कितना फायदा होता, अगर तू मुझे पकाकर खा जाता।" कहता कहता वह चकोर चला गया।

आत्मा की चिकित्सा

विक्रमार्क तो हठी था ही। वह फिर एक बार पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल कर, चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, अगर तुम आधी रात में अपनी आत्मा को शान्त करने के लिए यह सब कर रहे हो, तो मैं एक सलाह देता हूँ। वह यह कि इन आत्माओं का इतना विश्वास नहीं करना चाहिये। थोड़ी देर के लिए वे भले ही आनन्द दें, परन्तु अन्त में वे भय ही देती है। यह दिखाने के लिए मैं तुम्हें हिरण्यगुप्त की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने कहानी यों सुनानी शुरू की।

किसी ज़माने में अलका नगर में हिरण्यगुप्त नाम का व्यापारी रहा करता

बेताल कथाएँ

था। नगर में उसकी बड़ी दुकान थी। ऐसी कोई चीज़ न थी, जो उसमें न मिल सकती हो। रोज़ सैकड़ों आदमी उस दुकान में कुछ न कुछ खरीदने आते। कई साल दुकानदारी की, पर उसको दुकान से कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

इसकी वजह यह थी कि हिरण्यगुप्त बड़ा सीधा सादा, दयालु स्वभाव का था। कोई गरीब दुकान में आता तो उधार में माल दे देता। बच्चे अगर आते तो उनको इधर उधर की खाने की चीजें देता। इसलिये उधार देने से जो नुकसान होता था, वह भरा न जाता था।

खरीदनेवाले उसके हाथ में ठीक पैसा डाल रहे हैं कि नहीं, यह भी हिरण्यगुप्त न देखता। यह जान शरारती लोग उसके हाथ में खोटे सिक्के दे जाते। उनको बिना देखे ही वह तिजोरी में डाल लेता। अलका नगर के आधे से अधिक खोटे सिक्के उसकी तिज़ोरी में थे।

कई ने कई बार धोखा दिया। पर हिरण्यगुप्त हर किसी का हमेशा विश्वास करता। अगर किसी को कष्ट झेलता देखता तो उन पर दया करता। इस विश्वास के कारण अगर कोई ब्राह्मण तुलसी जल या प्रसाद लाकर देता तो बिना उसके पूछे ही खाने पीने की चीज़ें उसके घर भिजवा देता।

हिरण्यगुप्त की पत्नी हमेशा कोसती कुढ़ती रहती। जली-कटी सुनाती। "इतने दिनों से दुकान चला रहे हो। और कोई होता तो लाखों बनाता। तुमने कुछ न बनाया। आय की अपेक्षा उधार अधिक है। यह कब तक करते रहोगे!" उसने पति को बुरा भला कहा।

"क्या इतने दिन नहीं गुज़रे हैं? इसी तरह आगे भी गुज़र जायेंगे। एक आदमी को, जो यह रोये कि तीन दिन से माँड़ भी नहीं पिया है, मुट्ठी भर चावल देना क्या ग़ल्ती है?" हिरण्यगुप्त हमेशा कहा करता।

"यह बात है तो जो कुछ है बाँट दो। यह व्यापार किसलिये? पत्नी कहा करती।

परन्तु इस बीच एक घटना घटी। हिरण्यगुप्त जब तिजोरी में मुहरें डाल रहा था तो उसे एक पीतल की मुहर दिखाई दी। वह देखने में सोने की मुहर लगती थी। पर थी वह पीतल की ही।

वह मुहर किसने दी थी, यह बहुत सोचने पर भी हिरण्यगुप्त याद न कर सका। उस दिन तो उसकी पत्नी और भी उबल पड़ी।

"तुम निरे निखट्टू हो। यह बात सब को मालूम हो गई है। सब तुम्हें देखकर हँस रहे हैं।" उसने सुनाई।

हिरण्यगुप्त को गुस्सा आ गया। "क्या मैं बिना जाने छोड़ूँगा कि यह किसकी करतूत है!" उसने पत्नी से कहा।

अल्का नगर में एक वैरागी जादूगर था। उसे बहुत सी सिद्धियाँ प्राप्त थीं। वह इधर उधर के मन्त्र पढ़कर भूतों को भगानेवाला मान्त्रिक न था। हिरण्यगुप्त इस वैरागी के पास यह जानने के लिए गया कि उसे किसने खोटी मुहर दी थी।

वैरागी ने हिरण्यगुप्त को बिठाकर पूछा—"किस काम पर आये हो?

हिरण्यगुप्त ने कन्धे पर रखे दुपट्टे में से खोटी मुहर निकालकर वैरागी को दिखाते हुये कहा—"स्वामी! कोई इस पीतल की टिकिया को सोने की मुहर के रूप में मुझे सौंप गया है। अगर आपने यह बताया कि यह किसकी करनी है तो मैं आपको कुछ दक्षिणा दूँगा।"

वैरागी ज़ोर से हंसा। "अरे भाई यह किसने दी है, मैं अभी बता सकता हूँ, पर उससे तेरा क्या लाभ? कल कोई और तुझे इसी तरह धोखा दे जायेगा। जो तुम में बीमारी है, पहिले उसको चिकित्सा होनी चाहिये।" उसने कहा—

"बीमारी? मुझे तो कोई बीमारी नहीं है। मैं तो एकदम दुरुस्त हूँ, कभी जुकाम तक न आया।"
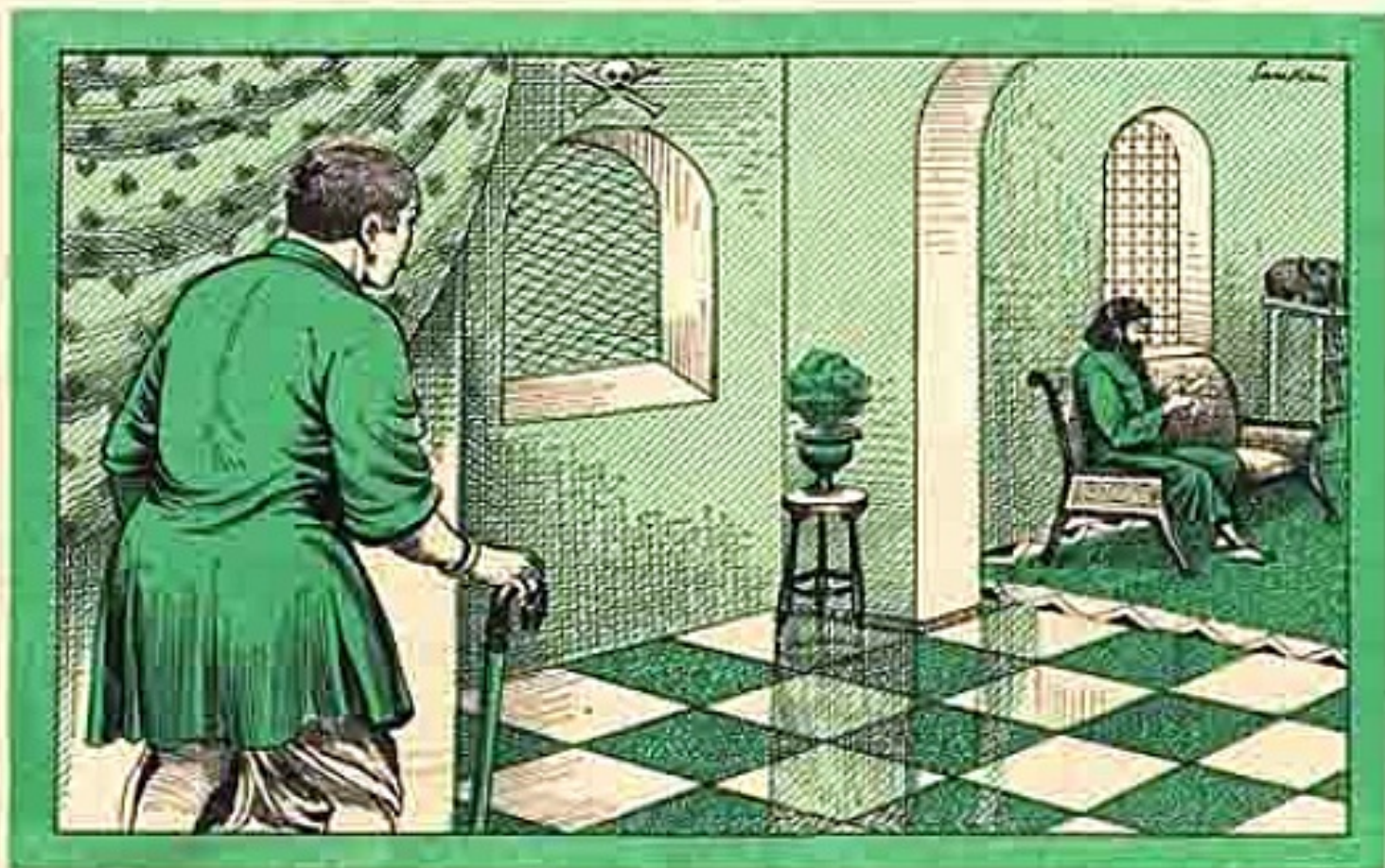
"अरे भाई, क्या तुम्हें आँखों की कमज़ोरी नहीं है?" वैरागी ने ज़ोर से पूछा।

"बिल्कुल नहीं, स्वामी जी, मील दूरी पर अगर कोई आदमी हो तो उसे पहिचान सकता हूँ। हथेली में राई के दानों को भी गिन सकता हूँ।" हिरण्यगुप्त ने झट कहा।

वैरागी फिर हँसा। "अरे भाई, यह कमज़ोरी वाकई आखों की नहीं है, आत्मा की है। तुम्हारी आत्मा बड़ी बीमार है। तुम पैसे की तरफ़ देख नहीं पाते हो। किसी गरीब को देखते हो तो तुम्हारा दिल पिघल उठता है। क्यों?" वैरागी ने पूछा।

"इसमें बीमारी क्या है स्वामी जी?" हिरण्यगुप्त ने पूछा।

"अरे यह कोई छोटी मोटी बीमारी है? इस बीमारी में तू व्यापार क्या करेगा? पाँच छः साल में तू दिवालिया हो जायेगा। कौड़ी भर भी तेरे पास न रहेगी। तुझे और तेरे बच्चों को, किसी को मुट्ठी भर दाने उधार देने होंगे। तेरी आत्मा की बीमारी बहुत भयंकर है। तुम उसकी चिकित्सा करवाते हो या उस बीमारी से बिगड़ने के लिए तैयार हो? तुम जो चाहो चुन लो।" वैरागी ने कहा।

हिरण्यगुप्त डर गया। वह व्यापार करके जीना चाहता था। उसने भयभीत हो वैरागी से पूछा—"स्वामी जी! मेरी बीमारी कैसे दूर होगी? मुझे क्या करना चाहिये? आपको कितनी दक्षिणा दूँ।"

"मुझे आठ सिद्धियाँ प्राप्त हैं। तेरी दक्षिणा की मुझे क्या ज़रूरत है? तुम अपनी आत्मा को मुझे देते जाओ। अगले अमावस्या तक मैं उसे ठीक कर दूँगा।

और तुझे वापिस कर दूँगा।"—बैरागी ने कहा।

"मेरी आत्मा तो मेरे पास है, मैं उसे आपको कैसे दे सकता हूँ!"—हिरण्यगुप्त ने कहा।

"बस यह मान लो कि तुम अपनी आत्मा देने के लिये तैयार हो। उसे कैसे लेना होगा, क्या करना होगा, यह सब मैं देख लूँगा।" बैरागी ने कहा।

"ऐसी बात है तो ले लीजिये स्वामी जी।" हिरण्यगुप्त ने कहा।

बैरागी ने आँखें मूँदलीं, कुछ पढ़ा। "जय बेताल" ज़ोर से चिल्लाया। दोनों हाथों से उसने मच्छर सा कुछ पकड़कर कहा—"अब तुम जा सकते हो। अमावस्या के दिन ठीक आधी रात में तुम्हारे घर आकर तुम्हारी आत्मा वापिस कर दूँगा।"

"तब तक क्या मैं अपने रोजमर्रे का काम कर सकता हूँ स्वामी जी!"—हिरण्यगुप्त ने पूछा।

"हाँ, हाँ, ज़रूर।"—बैरागी ने कहा।

हिरण्यगुप्त आश्चर्य करता अपने घर गया। यद्यपि उसकी आत्मा बैरागी ने ले ली थी, तो भी उसे कुछ ऐसा न लगा जैसे कुछ बदल गया हो। अपने वचन के अनुसार अमावस्या के दिन आधी रात को बैरागी हिरण्यगुप्त के घर आया।

हिरण्यगुप्त ने उत्कंठा पूर्वक पूछा—"स्वामी जी! क्या मेरी आत्मा लाये? क्या उसकी बीमारी चली गई है? कहाँ है? मुझे एक बार देखने दीजिये।"

"तेरा देखना ऐसा ज़रूरी नहीं है। उसे ठीक जगह रखना होगा। तुम अपनी दुकान खोलो और अपनी तिजोरी दिखाओ।"—बैरागी ने कहा।

हिरण्यगुप्त ने दुकान खोलकर तिजोरी दिखाई। बैरागी ने तिजोरी के छेद में से उसमें कुछ डाल दिया। उसमें शब्द हुआ। "इसको इसमें से न निकालना।"— बैरागी ने हिरण्यगुप्त से कहा।

आत्मा कैसी है, हिरण्यगुप्त ने यह देखना चाहा। इसलिए बैरागी के जाते ही उसने तिजोरी खोलकर देखा। उसे उसकी आत्मा सुनहले रंग में चमकती पैसे के ऊपर नाचती दिखाई दी। होने को तो वह छोटी अंगुली के बराबर थी। पर उसको देखकर वह बड़ा खुश हुआ।

इस घटना के बाद हिरण्यगुप्त का व्यापार बड़ी अच्छी तरह चला। उधार मांगने वाले खरीददार ख़तम हो गये। उसकी दुकान के सामने जो भूखे मूर्छित हो जाते थे, उसको भी उसने एक पैसा न दिया। खोटे सिक्के भी उसकी तिजोरी में न गिरे। किसी के हाथ में कोई खोटा सिक्का होता तो हिरण्यगुप्त दूर से ही देख लेता था। जिस व्यक्ति को पहिले धन की परवाह न थी अब वह जानता था, किस समय कितना धन तिजोरी में था।

तिजोरी में धन बढ़ने लगा। उसके साथ उसमें पड़ी उसकी आत्मा भी बढ़ने लगी। कुछ दिनों बाद उस आत्मा के लिए बड़ी तिजोरी बनवानी पड़ी। थोड़े दिनों में वह उससे भी बड़ी हो गई। आख़िर उसके लिए ख़ज़ाने के एक बड़े कमरे की ज़रूरत हुई।

हिरण्यगुप्त की व्यापार की चतुरता के बारे में ख़बरें दूर दूर तक गईं। वह करोड़पति हो गया।

उसे अब उसके बच्चे और पत्नी भगवान से अधिक समझते। परन्तु हिरण्यगुप्त के मन में कोई बीमारी घर कर गई। वह सालों से अपनी आत्मा रोज़ देखा करता था। वह आत्मा देखते देखते बदसूरत होगई। उसके मुँह पर झुर्रियाँ पड़ गईं। उसको देखते ही हिरण्यगुप्त को कुछ घृणा होती और कुछ डर भी लगता।

आख़िर अस्सी वर्ष की उम्र में हिरण्य-गुप्त ने खटिया पकड़ी। मरनेवाला था कि उसे नरक दिखाई दिया। वह डर के कारण जोर से चिल्लाने लगा। "मेरी आत्मा ने मुझे पापी बना दिया। मेरे

लिए नरक के द्वार खुल रहे हैं। मेरा उस बैरागी ने सत्यानाश कर दिया।" यह चिल्लाते चिल्लाते उसने प्राण छोड़ दिये।

बेताल ने यह कहानी सुनकर पूछा—"राजा, हिरण्यगुप्त का पापी होकर नरक जाने का क्या कारण था? कौन इस के लिए जिम्मेवार था? क्या उसकी पत्नी, जो उसे न कमाने के कारण, जली कटी सुनाई करती थी? या वह बैरागी जिसने उसकी आत्मा की चिकित्सा की थी? या वह आत्मा, जिसने उससे पैसे जमा करवाये थे? अगर तूने इन प्रश्नों को जान बूझकर जवाब न दिया तो तेरा सिर फूट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा—"ग़लती इनमें से किसी की न थी। पत्नी का यह सोचना कि उसका पति खूब कमाये, कोई ग़लती नहीं है। बैरागी ने आत्मा की चिकित्सा करने के लिए कहा था। उसने यह न कहा था कि वह स्वर्ग दिखायेगा। उसकी चिकित्सा का फल ठीक ही था। आत्मा को कोई ग़लतियाँ या पाप नहीं छूते। क्योंकि हर व्यक्ति को अपनी आत्मा को ठीक रास्ते पर रखना चाहिए। यह जिम्मेवारी उसी की है, जिसके पास आत्मा है। हिरण्यगुप्त का पापी होने का कारण हिरण्यगुप्त ही था। उसकी ग़लती यह थी कि उसने अपनी आत्मा को दूसरे को सौंप दिया था। ऐसा करके हिरण्यगुप्त ने स्वयं नरक को बुलावा दिया था।"

इस तरह विक्रमार्क का मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया। और पेड़ पर जाकर बैठ गया।

(कल्पित)

न्याय - निर्णय

किसी जमाने में, काश्मीर पर सुकेतु का राज्य था। श्रीनगर उस राज्य की राजधानी थी। श्रीनगर से दूर, एक नगर में, एक न्यायाधिकारी रहा करता था। न्याय करने में, वह बहुत अक्लमन्दी दिखाने लगा था। उसकी कीर्ति सारे काश्मीर राज्य में फैल गई।

हर जगह उसकी प्रशंसा सुनकर, सुकेतु राजा को आश्चर्य हुआ। उस न्यायाधिकारी की न्यायविधि को स्वयं, उसको देखने की इच्छा हुई। तुरत उसने मामूली आदमी के कपड़े पहिने, उस शहर में गया जहाँ वह न्यायाधिकारी रहा करता था।

सुकेतु महाराजा दो दिन की सफ़र के बाद वहाँ पहुँचा। वह नगर का द्वार पारकर नगर में घुसनेवाला था कि रास्ते के किनारे खड़े एक लँगड़े भिखारी ने पास आकर कहा—"बाबू, भीख!"

राजा उसको कुछ पैसा देकर आगे चल दिया। परन्तु भिखारी ने उसका पीछा न छोड़ा—"बाबू, भीख!" उसने फिर कहा।

"दे तो दिया है और क्या चाहिये?" राजा ने कहा।

"बाबू, नगर में पेंठ चल रही है। लँगड़ा हूँ। उतनी दूर जा नहीं सकता हूँ। आप अपने पीछे घोड़े पर बिठा लीजिये।" लँगड़े भिखारी ने कहा।

"अच्छा, तो बैठो।" यह कहकर राजा, उसे पीछे बिठाकर नगर के चौक में गया। वहीं पेंठ लग रही थी।

श्रीमती हेमलता

"मेरे घोड़े पर मुझे बिठानेवाला तू कौन होता है! पागल की तरह न बात कर। उतर।" राजा ने कहा।

"यह घोड़ा मेरा है। मैं नहीं उतरूँगा।" भिखारी ने ज़ोर से कहा।

"इतना अन्याय तो मैंने कहीं भी न देखा। जानते हो, इस नगर में बहुत बड़ा न्यायाधिकारी है?"

"बड़े से बड़ा न्यायाधिकारी हो, वह यही फैसला देगा कि घोड़ा मुझ जैसे लँगड़े का है न कि तुम जैसे हट्टे कट्टे आदमी का।" भिखारी ने कहा।

"देखें, क्या कहता है। चल अदालत चल!" राजा ने कहा!

"मुझे कोई डर नहीं है। चल चलें।" भिखारी ने कहा।

राजा ने सोचा कि देखें झगड़े का यह न्यायाधिकारी क्या फैसला देता है। राजा और भिखारी जब अदालत में पहुँचे तो कई मुकदमों की सुनवायी हो रही थी।

एक पटवारी और एक किसान एक स्त्री के बारे में झगड़ा करके, अदालत में हाज़िर थे। वह गूँगी थी। दोनों यह कह रहे थे कि वह उनकी पत्नी थी।

"यहीं पेंठ है, अब तुम उतरकर जा सकते हो।" राजा ने कहा।

"पहिले तुम उतरो।" भिखारी ने कहा।

यह सोचकर कि वह उतर नहीं पा रहा था और उसकी मदद चाहता था, राजा ने घोड़े से उतरकर भिखारी से कहा—"मेरा हाथ पकड़कर उतर आओ।"

"तू मुझे उतरने के लिए कहनेवाले कौन है! घोड़ा पर चढ़ा लिया था, क्या यह उसका एहसान है!" भिखारी ने पूछा।

"अच्छा, आप आज इस स्त्री को यहाँ छोड़ जाइये। कल मैं फैसला दूँगा।" न्यायाधिकारी ने कहा।

फिर एक कसाई और तेली आये। कसाई के हाथ में बहुत सारे टूटे हुए पैसे थे। तेली के हाथों में तेल था।

"हुजूर! इस कसाई ने मुझसे कहा कि अगर मैंने उसे एक मुदर की मांज दी, तो वह मुझसे तेल खरीदेगा। जब मैं पैसे गिन रहा था तो उसने उन्हें छीन लिया और कहने लगा कि पैसा उसका था। हुजूर फैसला करें।" तेली ने कहा।

"हुजूर! यह सच है कि मैं इसके पास तेल खरीदने गया था। मैं जेब से पैसे निकालकर यह देख रहा था कि मेरे पास कितने पैसे हैं तो इसने मेरा हाथ पकड़कर कहा कि पैसे मेरे हैं। हुजूर फैसला करें।" कसाई ने कहा।

जब दोनों ने यह शपथ की कि उन्होंने सच कहा था—न्यायाधिकारी ने कहा—"उन पैसों को मेरे पास रखते जाओ। कल आना। फैसला दूँगा।"

उसके बाद घोड़े के झगड़े की सुनवाई हुई।

"हुजूर! मैं श्रीनगर का हूँ। आज पैंठ में कुछ खरीदने के लिए मैं अपने घोड़े पर सवार होकर यहाँ आया। नगर द्वार के पास इस लँगड़े आदमी ने मुझसे भीख माँगी। मैंने कुछ पैसे दे दिये। फिर उसने मुझे अपने घोड़े पर सवार कर पैंठ के पास ले जाने के लिए कहा। मैंने वह भी किया। पैंठ के पास उसका उतरना तो अलग, उल्टा यह कहने लगा कि घोड़ा उसका है।" राजा ने कहा।

"हुजूर! मैं लंगड़ा हूँ। इसलिए जब कभी कहीं जाना होता है तो इसी घोड़े पर ही जाता हूँ। पैंठ के लिए आ रहा था कि यह आदमी मुझे नगर के द्वार के पास नीचे पड़ा हुआ दिखाई दिया। मैंने इससे पूछा कि क्यों ऐसे पड़े हुए हो। इसने कहा कि मैं बहुत थक गया हूँ, मुझे पैंठ तक ले चलो। मैं उसे पैंठ तक ले क्या गया कि आफ़त मोल ले ली। कहने लगा कि घोड़ा मेरा है। आप कृपया फ़ैसला कीजिये।" लंगड़े ने कहा।

न्यायाधिकारी ने एक क्षण सोचा—"इस घोड़े को यहाँ छोड़ जाओ। कल आना। मैं फ़ैसला दूँगा।" उसने कहा।

अगले दिन अदालत में फ़रियादी और देखनेवाले आये।

न्यायाधिकारी ने पटवारी को बुलाकर कहा—"यह स्त्री तुम्हारी पत्नी है। तुम इसे ले जाओ। इस किसान को, मैं पचास कोड़ों की सज़ा देता हूँ।

फिर न्यायाधिकारी ने दूसरे फरियादी को बुलाकर कहा—"यह पैसा तेरा है। ले जाओ। तेली ने ग़लत शिकायत की थी। मैं उसे पचास कोड़े की सज़ा देता हूँ।"

फिर न्यायाधिकारी ने राजा और लंगड़े को बुलाकर पूछा—"मैंने तुम्हारे घोड़े

को बीस घोड़ों के बीच बंधवा दिया है। क्या उसे पहिचान सकोगे?

राजा ने कहा कि पहिचान सकता हूँ। लंगड़े ने भी कहा कि वह पहिचान लेगा।

न्यायाधिकारी ने राजा से कहा—"पहिले तुम मेरे साथ आओ।" वह उसे साथ ले गया।

बीस घोड़ों के बीच राजा ने आसानी से अपना घोड़ा पहिचान लिया।

"अच्छा, तुम अदालत में जाकर लँगड़े को भेजो।" न्यायाधिकारी ने कहा।

राजा ने वही किया। लँगड़े ने भी राजा की तरह घोड़े को पहिचान लिया। न्यायाधिकारी ने अदालत में आकर राजा से कहा—"वह घोड़ा तुम्हारा है। झूटी शिकायत करने के कारण मैं लँगड़े को पचास कोड़ों की सज़ा देता हूँ।

इसके साथ उस दिन अदालत का काम ख़तम होगया। राजा को वहीं खड़ा देखकर न्यायाधिकारी ने पूछा—"अभी यहीं क्यों खड़े हो?"

"आपका न्याय बहुत सन्तोषजनक है। इस बारे में आपसे बात करने के लिए खड़ा हूँ। फैसला देना आसान काम नहीं है। और मेरी फरियाद में आपने ठीक फैसला दिया है। औरों के बारे में भी आपने ठीक फैसला ही दिया होगा। परन्तु इतनी अक़्लमन्दी से आप कैसे न्याय करते हैं?" राजा ने पूछा।

"वह इतना मुश्किल नहीं है, जितना कि तुम समझ रहे हो। उस स्त्री की ही बात लो। कल मैं उसे अपने घर ले गया था। घर जाते ही मैंने उससे कलमदान धोकर उसमें स्याही भरने के लिए कहा। उसने वह काम ऐसा किया जैसे प्रति दिन करती आ रही हो। मामूली किसान की

पत्नी वह न करती। इसलिए यह साफ़ हो गया कि वह पढ़े-लिखे पटवारी की ही पत्नी थी।"

"आपने यह कैसे निर्णय किया कि रुपये कसाई के ही थे?" राजा ने पूछा।

तुमने देखा ही होगा कि तेली के हाथ तेल से लथपथ थे। अगर वे रुपये उसके होते तो उनमें तेल लगा हुआ होता। मैंने उनको पानी में डालकर देखा। एक बूंद तेल भी पानी पर न तैरा।" न्यायाधिकारी ने कहा।

"हमारे झगड़े में आपने यह कैसे तय किया कि घोड़ा मेरा है? क्या लंगड़े ने घोड़ा नहीं पहिचाना था?" राजा ने पूछा।

"पहिचान लिया था। पर मैं पहिले ही जानता था कि तुम दोनों घोड़ा पहिचान लोगे।" न्यायाधिकारी ने कहा।

"फिर आपने कैसे यह जाना कि घोड़ा मेरा है।" राजा ने फिर पूछा।

"मैंने यह नहीं देखा था कि तुम में से कौन घोड़ा पहिचानता है, पर देखा यह था कि घोड़ा तुम में से किसको पहिचानता है। उसने तुम्हें ही पहिचाना।" न्यायाधिकारी ने कहा।

सुकेतु उस न्यायाधिकारी की प्रखर बुद्धिमत्ता से बहुत प्रभावित हुआ। श्रीनगर वापिस जाने के बाद उसने उस न्यायाधिकारी को बुलवाया और उसको एक जागीर ईनाम में दी।

जब न्यायाधिकारी को यह मालूम हुआ कि उसने राजा का ही फैसला किया था तो उसके आनन्द की सीमा न रही।

त्रिलंग देश में इधर उधर के राजाओं का शासन जब खतम होगया तो राजवंश के लोग जहाँ तहाँ बिखर गये और अपने किलों को छोड़कर ग्रामों में बस गये। पर उनमें से कुछ अपने घमंड में, क़िलों में ही रहते रहे।

इस प्रकार का जीवन व्यतीत करनेवालों में प्रसेन एक था। एक पहाड़ पर उसका क़िला था। पहाड़ का नाम ऊंचा टीला था। वह अपने नौकर-चाकरों के साथ वहीं रह रहा था और अपने ग़रीब बन्धु-बान्धवों का पालन-पोषण कर रहा था।

प्रसेन के सिवाय एक लड़की के और कोई न था। उसका नाम था ललितांगी। अगर उसने उसकी शादी कर दी तो वह ज़िन्दगी भर आराम से रह सकता था। उसके बाद उस क़िले में और किसी को तो रहना न था।

परन्तु ललितांगी का विवाह पिता के लिये एक समस्या थी। वह न चाहता था कि किसी ऐरे-गैरों को अपनी लड़की दे। ललितांगी बहुत सुन्दर थी। सम्राट के राजकुमार के लायक थी। राजवंश से सम्बन्धित परिवारों में ही उसके लिए वर खोजना था। उन वंशों में आधे से अधिक उसके शत्रु थे। शत्रुता नयी न थी; पुश्त दर पुश्त चली आ रही थी। इस परम्परा को प्रसेन नहीं तोड़ना चाहता था।

ऊंचे टीले के चार कोस दूरी पर लाल पहाड़ पर जयसिंह रहा करता था। उसका लड़का बालचन्द्र बहुत खूबसूरत था। वह हर तरह से ललितांगी के

रवीन्द्र शर्मा

की नौकरी में था। वह नवयुवक था। वधू पक्षवालों में किसी ने उसे न देखा था। परन्तु यह मालूम कर लिया गया कि वह बदसूरत न था।

प्रसेन ने अपने आदमियों को काली पहाड़ भेजकर विवाह निश्चित किया। जयन्त ने ख़बर भिजवाई कि विवाह के दो दिन पहिले अपने नौकर, व सिपाहियों सहित वह पहुँच जायेगा।

अपने होनेवाले दामाद का स्वागत करने के लिए प्रसेन के यहाँ बड़े ज़ोर-शोर से तैयारियाँ होने लगीं। क़िले तक पहुँचनेवाली सड़क साफ़ की गयी। सड़क पर मशालों का भी इन्तज़ाम किया गया। दावतों के लिए शिकार आदि का प्रबन्ध किया गया। जिस दिन वर को आना था सब तैयारी पूरी करके उसकी प्रतीक्षा में बैठे थे। शाम हुई: वर न आया। सब निराश हो, भोजन के लिए बैठ गये।

जयन्त, तीस आदमियों को लेकर उसी दिन निकल पड़ा, जिस दिन उसने आने का वायदा किया था। परन्तु रास्ते में उसको एक मित्र दिखाई दिया। वह मित्र बालचन्द्र के अतिरिक्त और कोई न था।

योग्य वर था। परन्तु जयसिंह, प्रसेन की शत्रु श्रेणी में था। उन दोनों ने कभी एक दूसरे को देखा भी न था। प्रसेन के परदादा के समय में उनका और इनका भयंकर युद्ध हुआ था। उसके बाद दोनों के सम्बन्ध टूट गये।

आख़िर प्रसेन ने अपनी लड़की के लिए एक वर खोज निकाला। वह काली पहाड़ी पर रहा करता था। काली पहाड़ी के राजाओं का और ऊँचे टीले के राजाओं का पुराना सम्बन्ध था। उनका भी बड़ा वंश था। वर, जयन्त, बादशाह

बालचन्द्र को देखते ही जयन्त को बड़ी खुशी हुयी। छुटपन में वे एक जगह मिले थे। उन दोनों के मामाओं का एक ही नगर था। जयन्त ने मित्र से अपनी शादी के बारे में कहा। "सुनते हैं, ललितांगी बहुत सुन्दर है। क्या तुम उसके बारे में कुछ जानते हो!" उसने पूछा।

"मैंने नहीं सुना है। मैं उनके बारे में कुछ नहीं जानता हूँ।" बालचन्द्र ने कहा।

"कल शाम तक मैं ही देख लूँगा। उनका बहुत प्रतिष्ठित वंश है। सुना है प्रसेन की आन शान कुछ भी कम नहीं हुई है। उन जैसों की लड़कियों से शादी करने में ही बड़प्पन है। और अगर वधू सुन्दर हो तो कहने ही क्या? मैं अपने को बहुत सौभाग्यशाली समझता हूँ।" जयन्त ने कहा।

बालचन्द्र अपने गाँव जा रहा था। दोनों लाल पहाड़ी तक साथ गये। छुटपन की बातें करते, दोनों साथी अपने पड़ाव से निकले। जयन्त ने अपने आदमियों को बाद में आने के लिए कहा।

पड़ाव से निकलने के थोड़ी देर बाद दोनों मित्रों ने एक घाटी में प्रवेश किया। उन्हें वहाँ डाकू दिखाई दिये। यद्यपि डाकू सात आठ थे तो भी उन दोनों ने तलवारें निकाल कर, उनका खूब मुकाबला किया। थोड़ी देर बाद जयन्त के आदमी आ गये। डाकू भाग गये।

परन्तु जयन्त बुरी तरह घायल हो गया। यह डाकुओं के भाग जाने के बाद ही, बालचन्द्र जान सका। बालचन्द्र जिस काले घोड़े पर सवार था, वह बहुत तेज़ था। वह भी बड़ा पराक्रमी था। इसलिये

उसे तनिक भी चोट न लगी। जयन्त का सफ़ेद घोड़ा इतना तेज़ न था। उसके पेट में तलवार की चोट लगी थी।

बालचन्द्र ने अपने मित्र की मरहमपट्टी की। उसको एक जगह लिटाकर, सेवा शुश्रूषा की। पर जयन्त जान गया कि वह जीवित न रह सकेगा। उसने अपने मित्र से कहा—"भाई....अन्तिम घड़ी समीप आ गई है। प्रसेन मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। उन्होंने बहुत-सी तैयारियाँ कर रखी होंगी। तुम तुरत ऊँचे टीले तक जाओ और उनसे इस दुर्घटना के बारे में कहो और मेरी तरफ़ से उनसे माफ़ी माँगो, क्योंकि मैंने उनको निराश किया है। तुम मुझे यह वचन दो कि बिना यह काम किये और कोई काम न करोगे। मेरे शव को काले पहाड़ भेजने की ज़रूरत नहीं है। मेरी अन्त्येष्टि क्रिया इस घाटी में ही कर दो। यह काफ़ी है काले पहाड़ तक मेरी मृत्यु की वार्ता पहुँचादी जाये।" उसके बाद जयन्त ने प्राण छोड़ दिये।

अपने मित्र का अन्त्येष्टि संस्कार करके, बालचन्द्र काले घोड़े पर सवार हो, ऊँची टीले की ओर जल्दी रवाना हुआ। मित्र

मर गया था, इसलिये तो वह दुखी था ही, फिर इसलिये भी दुखी था कि उसको अपने मुख से यह दुखद वार्ता प्रसेन को बतानी होगी और—प्रसेन की दृष्टि में वह जानी दुश्मन था, यह बात भी उसके मन को बींध रही थी।

रास्ते में वह कहीं न रुका। रात को काफ़ी देर बाद वह ऊँचे टीले के किले में पहुँचा। प्रसेन के परिवार को, जो तभी भोजन करने के लिए बैठा था घोड़े की आहट सुनाई दी। थोड़ी देर में, बालचन्द्र, उनके पास आ पहुँचा।

उसको देखकर, सबने सोचा कि वह वर ही होगा। ललितांगी, भोजन छोड़कर कहीं और चली गई। परन्तु जाने से पहिले उसने उसको अच्छी तरह देख लिया। वह भी उसके सौन्दर्य को देखकर चकरा गया।

फिर उसने प्रसेन की ओर मुड़कर कहा—"मुझे, इस तरह आने के लिए माफ़ कीजिये। रास्ते में एक ऐसी घटना घटी, जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती थी।"

"वह बात बाद में भी की जा सकती है। पहिले मुँह हाथ धोकर, भोजन करो।" प्रसेन ने कहा।

तुरत एक और ने कहा—"प्रसेन किस्मतवाला है, उसकी लड़की भी।"

बालचन्द्र को ये बातें बाण की तरह चुभ रही थीं। यह जान कर कि वे सब यह सोच रहे थे कि ललितांगी तभी उसकी पत्नी हो चुकी थी, बड़ा दुख हुआ क्यों कि उसको देखते ही वह उससे प्रेम करने लगा था। पर वह अच्छी तरह जानता था कि उसका उससे विवाह होना असम्भव था। प्रसेन आत्महत्या कर लेगा, पर अपनी लड़की की मुझ से शादी न करेगा।

भोजन समाप्त हुआ। सब उठे। बालचन्द्र धीमे से बाहर खिसक गया। वह वहाँ नहीं है, पहिले पहल प्रसेन को पता लगा। वह जल्दी जल्दी बाहर गया। बाहर मशालों की रोशनी में, काला घोड़ा चढ़कर, वह जाता हुआ दिखाई दिया।

"अभी कहाँ जा रहे हो? तुम्हारे ठहरने का प्रबन्ध किया है।" प्रसेन ने कहा।

"मैं आपसे एक बार मिलने के लिए आया हूँ। असली बात तो यह है कि आज सवेरे ही मुझे डाकुओं ने मार दिया था। दुपहर को मेरा दहन भी कर दिया

थोड़ी देर में बालचन्द्र भी भोजन के लिए बैठ गया। वह किसी भी हालत में, यह कहकर कि वह जयसिंह का लड़का था प्रसेन के मन को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहता था। जयन्त की मृत्यु की बात बताकर वह चला आना चाहता था।

उसने कभी यह न सोचा था कि वहाँ के लोग उसे ही जयन्त समझने की गल्ती करेंगे। वे क्या समझ रहे थे, भोजन करते समय उसे मालूम हो गया था।

"वर! वधू से कोई कम सुन्दर नहीं है।" एक ने कहा।

गया था। यह बात मुझे आपने कहने न दी। अब मुझे जाने की अनुमति दीजिये।" कहते हुए बालचन्द्र ने लगाम छोड़ दी। उसका काला घोड़ा हवा से बातें करता लुप्त-सा हो गया।

प्रसेन यह सुनने के बहुत देर बाद तक काठ-का-सा हो गया। काटो तो खून नहीं। फिर उसने जाकर, जो कुछ उसने सुना था, सब को सुनाया। सब हैरान थे।

उसने वर का भूत देखा था। यह सुनते ही, ललितांगी लगातार आँसू बहाने लगी। क्योंकि बालचन्द्र को देखते ही उसने उसे वर लिया था। दासियों ने उसे मुबारकबाद भी दिये थे।

जयन्त को डाकुओं ने मार दिया था, और उसका दहन संस्कार भी हो गया था, यह अगले दिन ही साबित हुआ। इस कारण, जो अतिथि पिछले दिन आया था, वह भूत था, यह बात और पक्की हो गई।

कुछ दिन बीत गये। ललितांगी ने खाना-पीना छोड़ दिया। वह उस भूत के लिए ही तड़पने लगी। एक दिन चान्दनी रात में वह ठंडी हवा के लिए अपनी खिड़की में आ बैठी। नीचे देखती है तो उसे वही व्यक्ति काले घोड़े पर बैठा दिखाई दिया, जिसकी शक्ल उसके मन में चक्कर काट रही थी। ललितांगी बिना कुछ कहे लगातार उसकी ओर देखती रही। वह भी उसकी ओर ध्यान से देखता जाता था।

इतने में ललितांगी की दासी ने आकर पूछा—'क्या है वह'? उसने भी खिड़की से नीचे देखा। तुरत वह "अरे! भूत" जोर से चिल्लाई, और बेहोश गिर गई। ललितांगी ने उसके मुँह पर पानी छिड़क कर नीचे जो देखा तो कोई न था।

भूत वर फिर दिखाई दिया है। यह जान सिवाय ललितांगी के और सब बहुत घबराये। उसके कमरे में सोने के लिए सब दासियों ने इनकार कर दिया। ललितांगी ने और किसी कमरे में सोने से इनकार कर दिया क्योंकि उस भूत को देखने के लिए वह बेहाल हो रही थी। वह उसके साथ शादी करने के लिए भी तैयार थी।

ललितांगी को वे समझा-बुझा न सके। उसको अपने कमरे में सोने दिया। एक सप्ताह बीत गया। उसके बाद एक दिन ललितांगी गायब हो गई। जब सवेरे दासियाँ कमरा देखने गईं तो कमरा खाली था। वह वहाँ न थी। लोगों ने कहा कि भूत ललितांगी को उठा ले गया था। परन्तु एक सप्ताह बाद, लाल पहाड़ी पर से एक पत्र आया। वह पत्र जयसिंह ने लिखकर भेजा था।

"आपकी लड़की ललितांगी यहाँ सुरक्षित पहुँच गई है। आपकी अनुमति से उस लड़की का मैं बालचन्द्र से विवाह करना चाहता हूँ। उस लड़की के कारण हम परस्पर हमेशा के लिए मित्र हो सकेंगे, यह आशा करता हूँ। सपरिवार आप विवाह में उपस्थित होकर, वधू के साथ वर को भी आशीर्वाद दें, यह मेरी विनम्र प्रार्थना है।"

"मेरी पुत्री भूत की अपेक्षा शत्रु से शादी करे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। मैं नहीं जानता था कि जयसिंह इतना अच्छा आदमी है।" प्रसेन ने कहा।

शुभमुहूर्त में, ललितांगी और बालचन्द्र का वैभव के साथ विवाह हुआ।

[२]

[चीन देश में एक गरीब लड़का रहा करता था। उसका पिता गुज़र गया था। माँ कितनी ही मुसीबतें झेलती उसका पालन पोषण कर रही थी। वह अपने साथियों के साथ गलियों में अवारागिर्दी करता फिरता। कोई कामधाम न करता। इतने में, उस शहर में किसी और देश से कोई जादूगर आया। अलादीन से उसे काम था। इसलिये उसने उससे कहा कि वह उसका चाचा था। इस तरह उसने उसकी माँ से भी परिचय कर लिया। उसकी माँ ने सोचा कि वह नया सम्बन्धी उसके लड़के को कामकाजी बना देगा।]

खुशी के कारण उस दिन अलादीन रात भर सो न सका। सवेरे होते ही किसी ने घर का दरवाजा खटखटाया। अलादीन की माँ ने जाकर दरवाजा खोला। बाहर जादूगर था। उसने पूछा—"अलादीन क्या कर रहा है?" यह प्रश्न सुनते ही अलादीन एक छलांग में दरवाजे के पास पहुँचा। उसने अपने "चाचा" को गले लगा लिया।

फिर, जादूगर, अलादीन का हाथ पकड़ कर उसे बाजार ले गया। दोनों एक कपड़े की दुकान में गये। "इसकेलिए कुछ अच्छी पोषाक दिखाइये।" जादूगर ने दुकानदार से कहा। दुकानदार ने कुछ

बहुत कीमती वस्त्र दिखाये। "इनमें से जो तुम्हे पसन्द आयें, ले लो।" जादूगर ने अलादीन से कहा। उसने सबसे अच्छी पोशाक चुन ली। जादूगर ने उसके दाम दे दिये।

दोनों वहाँ से स्नानागार गये। नहा धोकर अलादीन ने नये कपड़े पहिन लिये। अपने कपड़े देखकर वह फूला न समाया।

फिर दोनों मिलकर व्यापारियों की गली में गये। जादूगर ने वहाँ अलादीन को वह दिखाया—व्यापारी कैसे माल खरीदा बेचा करते थे। "बेटा, क्यों कि तुम भी व्यापारी बनने जा रहे हो इसलिये इस गली में आया करो और व्यापारियों से जान पहिचान बढ़ाया करो।" जादूगर ने अलादीन को सलाह दी।

दुपहर तक वे नगर में तरह तरह की चीज़ें देखते रहे। बड़े बड़े मकान-मस्जिदों का चक्कर भी लगा आये। फिर वे एक भोजनशाला में गये। वहाँ उनको चान्दी के थालों में भोजन परोसा गया। भोजन के बाद, जादूगर, अलादीन को राजमहल दिखाने ले गया।

वह देखने के बाद, जादूगर, अलादीन को ऐसी जगह ले गया, जहाँ विदेशी व्यापारी ठहरा करते थे। जादूगर भी वहाँ रह रहा था। उसने शाम को वहाँ ठहरे हुये व्यापारियों को दावत दी। दावत के समय उसने अलादीन का परिचय देते हुये कहा—"यह मेरे बड़े भाई का लड़का है।"

अन्धेरा होते होते जादूगर ने अलादीन को उसके घर पहुँचा दिया। अपने लड़के की नई पोषाक देख कर अलादीन की माँ की खुशी का ठिकाना न रहा।

"देवर, हम तुम्हारा कर्ज कभी न कभी चुका देंगे।" उसने कहा।

"इसमें कर्ज क्या है भाभी! क्या वह मेरा लड़का नहीं है! जाने उसका पिता उसके लिए क्या क्या करता....मैंने उससे अधिक क्या किया है? तुम उसके भविष्य के बारे में कोई फ़िक्र न करो।" जादूगर ने कहा।

"तुम्हारा भला हो, सौ वर्ष जिओ। इसकी देखभाल का जिम्मा तुम्हारे सिर पर है। वह तुम्हारी बात माने और तुम्हारा नाम रोशन करे, यही मेरे लिए काफ़ी है।" अलादीन की माँ ने कहा।

"तब अलादीन निरा बच्चा था। अब बड़ा हो गया है। मैं तो यह चाहता हूँ कि वह अपने पिता की तरह नाम कमाये और बुढ़ापे में तेरी परवाह करे। कल शुक्रवार है इसलिये दुकानें बन्द करदी जायेंगी। परसों अलादीन की दुकान खुलवा दूँगा। कल सवेरे आकर उसको ले जाऊँगा। शहर के बाहर के बाग-बगीचे दिखाऊँगा। वहाँ शहर के बड़े बड़े लोग घूमने फिरने जाते हैं। मन

बहलाव करते हैं। हम इसका उन लोगों से परिचय करायेंगे।" यह कह कर, जादूगर उससे इजाजत लेकर अपने रहने की जगह चला गया।

उस दिन, रात भर अलादीन अपने भविष्य के बारे में सपने देखता रहा। वह अगले दिन बहुत सवेरे ही उठ गया। जादूगर ने जब आकर दरवाजा खट खटाया तो उसने दरवाजा खोल दिया। जादूगर ने उसको गले लगाकर कहा—"बेटा, मैं तुझे आज ऐसी चीज़े दिखाऊँगा, जो तूने अपने जन्म में कभी न देखी होगी।

दोनों हाथ मिलाकर चलते चलते शहर के फाटक से बाहर चले आये। वहाँ बड़े बड़े बगीचे थे। और बगीचों में रईसों के मकान थे। अलादीन ने उन्हें कभी न देखा था।

शहर से वे बहुत दूर चले गये। वे थक गये। आराम करने के लिए वे एक बगीचे में गये। वहाँ एक फव्वारा था। और उसके चारों ओर पीतल के चमकते शेर थे। जादूगर ने एक थैला निकाला। उसमें से फल, चबैना निकालकर, अलादीन को देते हुये कहा—"भूख लग रही होगी। इन्हे खाओ, बेटा।" खाने पीने के बाद वे दोनों फिर साथ निकले।

"चाचा, हमें अभी कितनी दूर जाना है? बगीचे सब पार करके आ ही गये हैं। आगे सिवाय उस पहाड़ के कुछ नहीं है। आओ, वापिस चलें। चलते चलते मेरे पैरों में छाले पड़ गये हैं।" अलादीन ने कहा।

"अरे मर्द नहीं हो क्या? इतने में ही थक गये। अब तुम्हे एक और तरह का बगीचा दिखाने जा रहा हूँ। इन सब बगीचों से वह और ज्यादह सुन्दर है।

संसार में किसी महाराजा के पास भी वैसा बाग न होगा। "जादूगर ने कहा।

अलादीन चलता चलता कहीं थक न जाये, इसलिये जादूगर ने उसको तरह तरह की कहानियाँ सुनाईं। इतने में वे दोनों एक जगह पहुँचे। यह जगह देखने के लिये ही जादूगर एक और देश से चीन आया था।

"हमें जहाँ जाना था, वहाँ पहुँचे गये हैं। थोड़ी देर आराम करो। फिर तुझे कई अजीब चीज़े दिखाऊँगा—ऐसी चीज़ें, जिनकी कभी किसी आदमी ने कल्पना भी न की होगी।" जादूगर ने कहा।

अलादीन के कुछ देर तक आराम करने के बाद जादूगर ने उसको ईन्धन चुन लाने के लिए कहा। उसने कहा कि आग जला कर उसे कितनी ही अजीब चीज़ें दिखायेगा।

यह सोचकर कि जाने क्या क्या "चाचा" दिखायेंगे, वह पेड़ों के पास सूखी सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी करके गट्ठर बाँधकर जादूगर के पास ले गया। जादूगर ने उस ईन्धन से आग जलाई,—

जब वह खूब बढ़ गई तो उसमें एक डिब्बी में से कोई चूर्ण लेकर छिड़ककर वह कुछ मन्त्र पढ़ने लगा।

तुरत सब जगह अन्धेरा छा गया। भूमि काँप-सी उठी। फिर भूमि फटी और अन्दर संगमरमर का पत्थर दिखाई दिया। उस पर एक ताम्बे का छल्ला लगा हुआ था।

यह देखकर अलादीन की अक़्ल जाती रही। उसने भाग जाना चाहा। पर जादूगर ने उसे पकड़ लिया....उसके सिर पर चोट मारी। चोट के कारण अलादीन बेहोश गिर गया। जादूगर को जादू के बल से उसके होश लाने पड़े।

अलादीन ने पूछा—"मैंने कोई गलती की है क्या, इसी वजह से मुझे पीटा है?"

जादूगर ने उससे धीमे से कहा—"बेटा; मैंने तुम्हें इसलिये पीटा था कि तुम बचपन छोड़ दो और अपने को बड़ा समझो। मैं तुम्हारे पिता का भाई हूँ। तुम्हारा चाचा हूँ। मेरी बात मानना तुम्हारा कर्तव्य है। अगर तुमने मेरी बात मानी तो मैं तुम्हें इस संसार के सबसे बड़े सम्राट से अधिक धनी बना दूँगा। इसलिए जो मैं कहूँ उसे होशियारी से सुनो। तुमने देख ही लिया होगा....कि मेरे मन्त्र बल के कारण जमीन कैसे फट गई थी। उस संगमरमर के पत्थर के नीचे बहुत बड़ा खजाना है। उसके उठाने की शक्ति तुम में ही है, दुनियाँ में और किसी में नहीं। तुम्ही उसे उठाकर, उसके नीचे की सीढ़ियों पर जा सकते हो। जो मैं कहूँ, करो....जो खजाना वहाँ मिलेगा, उसे हम दोनों आपस में बाँट लेंगे।" जादूगर ने कहा।

यह सुन अलादीन चोट की दर्द भी भूल गया। "चाचा, जो मुझे करना है;

बताओ। जो तुम कहोगे, वही मैं करूँगा।" उसने कहा।

जादूगर ने अलादीन को पास बुलाकर उससे पूछा। "बेटा! तुम मेरे लिए अपने लड़के से भी अधिक हो। तेरे सिवाय इस संसार में मेरा और कोई नहीं है। तू ही मेरा सब कुछ है। तुझे देखने के लिए, धनवान बनवाने के लिए मैं इतनी दूर आया हूँ। देखो, उस पत्थर में लगे ताम्बे के छल्ले को पकड़कर पत्थर उठाना। वह ऊपर आजायेगा।" जादूगर ने कहा।

"क्या चाचा, उतना बड़ा पत्थर मैं अकेले उठा सकूँगा? मुझ में उतनी ताकत नहीं है, तुम भी कुछ मदद करो।" अलादीन ने कहा।

"यह काम तुझे अकेले ही करना होगा। मेरा हाथ लगा कि नहीं कि हमारी सारी मेहनत फिजूल जायेगी। कहा तो था कि तुम ही उस पत्थर को उठा सकोगे और कोई नहीं। पत्थर उठाते समय, अपना नाम, अपने पिता और माँ का नाम लेना।" जादूगर ने कहा।

अलादीन ने अपनी सारी ताकत लगाकर, जादूगर के कहे अनुसार पत्थर उठा दिया। उसे वह अधिक भारी न लगा। पत्थर उठाते ही—बारह सीढ़ियाँ थीं। उसके बाद एक दरवाज़ा था।

तब जादूगर ने यों कहा—"अलादीन, जो मैं कह रहा हूँ उसे बड़ी सावधानी से सुनो। जो मैं कहूँ ठीक वैसा ही करो। भूलकर भी थोड़ी-सी ग़ल्ती न करना। सीढ़ियाँ उतरकर नीचे गुफा में जाओ। वहाँ एक बहुत बड़ा कमरा होगा। उसके चार भाग होंगे। उन सब में सोना-चान्दी भरा हुआ होगा। तुम वहाँ क्षण भी न रुकना। न वहाँ की चीज़े छूना, न दीवारें

ही। यह भी ख़्याल रहे कि तुम्हारे कपड़े तक किसी चीज़ को न छुयें। अगर कोई चीज़ छुयी तो तुम भी काले पत्थर हो जाओगे। खबरदार। कमरे के एक सिरे पर एक दरवाज़ा होगा। जैसे तूने पत्थर उठाते समय, अपना, अपने पिता का, अपनी माँ का नाम लिया था, वैसे वहाँ भी लेकर दरवाज़ा खोलना। उसके बाद, अच्छे फलोंवाला एक बाग तुझे दिखाई देगा। उस बाग में पचास गज जाने के बाद तुझे तीस सीढ़ियाँ दिखाई देंगी। उन पर चढ़जाने से, एक बड़ा मकान दिखाई देगा। उस मकान के एक सिरे पर एक लालटेन लटकी हुई होगी। उसको उतारो। उसका तेल बाहर फेंक दो। फिर उसे अपने कुड़ते में छुपा लो। उसमें मामूली तेल नहीं है इसलिए तुम्हारे डरने की ज़रूरत नहीं कि कपड़े बिगड़ जायेंगे। लालटेन को लेकर जब वापिस चलो तो बाग में ठहरना, और जितना फल तुम चाहो तोड़ लेना। समझे।"

जादूगर ने यह सब बताने के बाद, अपने हाथ की एक अंगूठी निकालकर अलादीन को पहिनाते हुए कहा—"बेटा,
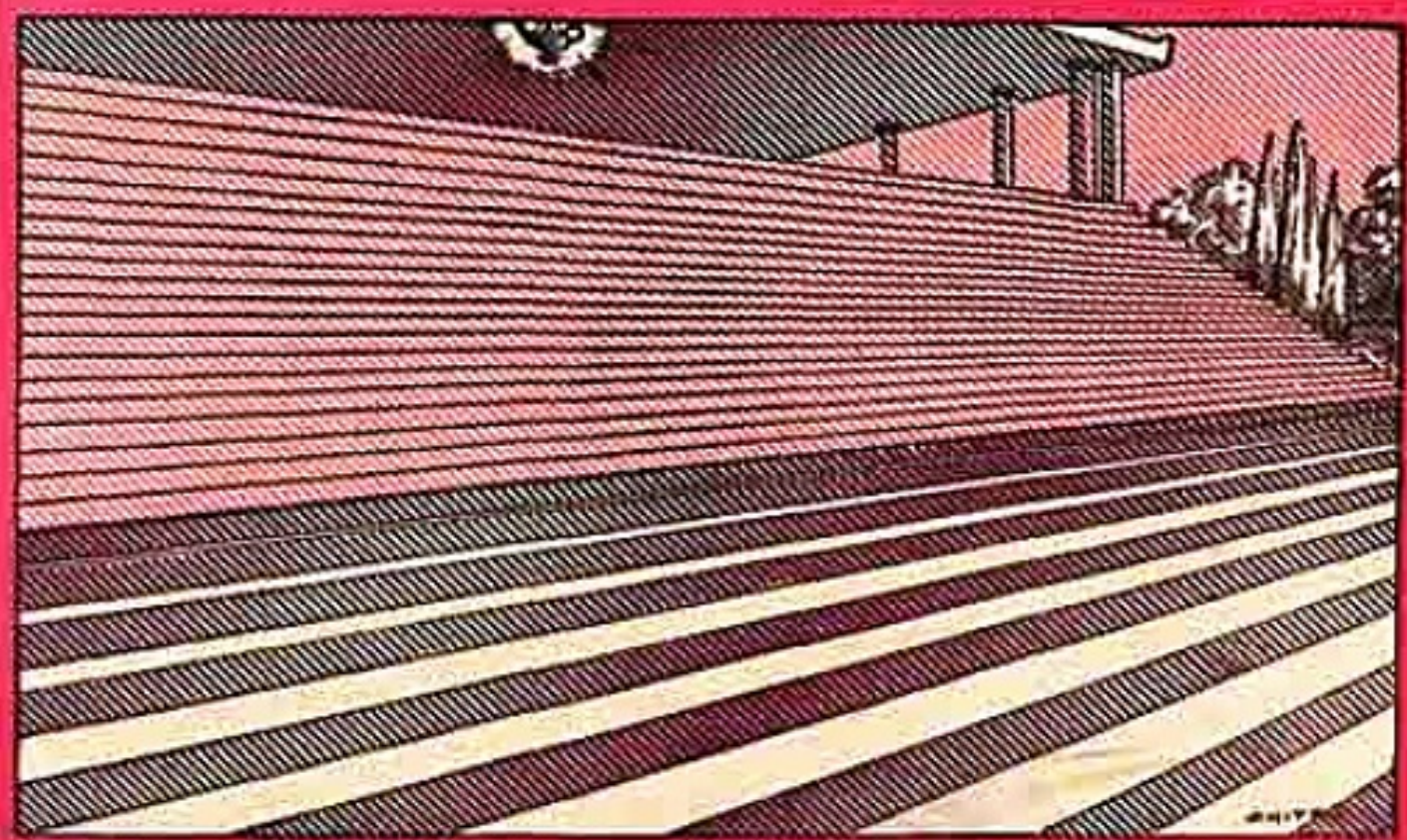
यह अंगूठी, तुम्हारी सब विपत्तियों में रक्षा करेगी। पर तुम वही करना जो मैंने कहा है। डरना मत। हिम्मत से काम लेना। थोड़ी देर में ही तुम संसार में सबसे अधिक धनी हो जाओगे।"

अलादीन गढ़े में कूदा। सीढ़ियाँ उतरकर गुफ़ा में घुसा। जैसे जादूगर ने कहा था—एक बड़ा कमरा चार भागों में बँटा हुआ था। और हर कमरे में सोना था। वहाँ उसने किसी चीज़ को न छुआ। कमरा पार करके बाग में गया। फिर सीढ़ियाँ पार करके मकान में पहुँचा। वहाँ लटके हुए लालटेन को उसने उतारा। उसका तेल फेंक दिया। लालटेन को कुड़ते में छुपा लिया। फिर बाग में आकर उसने पेड़ों को देखा।

पेड़ों पर रंग-बिरंगे फल थे। पर चूँकि अलादीन नादान था, इसलिए वह यह न जान सका कि वे मामूली फल न थे, परन्तु हीरे मोती थे। कीमती हीरे, पन्ने, मोती, और जाने क्या क्या, उन पेड़ों की टहनियों पर लगे हुए थे। वैसे हीरे मोती संसार में किसी राजा के पास भी न थे। उनको देखकर अलादीन ने सोचा कि वे रंग-

बिरंगे कांच के टुकडे थे। कीमत भले ही न जानता हो, वह उनकी रोशनी देखकर बड़ा प्रभावित हुआ। इसलिए उन्हें तोड़कर उसने जेबें भर लीं। जितने हीरे ढो सकता था, उसने ले लिये। गुफ़ा से बाहर निकल कर, सीढ़ियाँ पार करके गढ़े में पहुँचा। गढ़े से वह ऊपर न चढ़ सका—क्योंकि उसकी जेबें मोती-हीरों से भरी पड़ी थीं।

"चाचा, हाथ पकड़कर मुझे ऊपर उठाओ।" अलादीन चिल्लाया।

"शायद लालटेन भारी हो वह पहिले मुझे दे दो।" जादूगर ने कहा।

"वह अब नहीं दी जा सकती। पहिले मुझे ऊपर खींचो, तब दूँगा।" अलादीन ने कहा।

जादूगर तो लालटेन ही चाहता था। और जब वह हाथ में न आई तो वह झुँझलाया। "पहिले लालटेन दो।" उसने फटकारा। पर अलादीन, क्योंकि उसने जेबें पूरी तरह भरली थीं, इसलिए कुड़ते में से वह लालटेन निकालकर भी न दे सका।

जादूगर यह सोचकर नाराज हुआ कि अलादीन वह लालटेन अपने पास ही रखना चाहता था। "अरे दुष्ट, अगर वह लालटेन तूने न दी तो देख तेरी क्या गत बनाता हूँ।" तिलमिलाता वह आग के पास गया। कुछ मन्त्र पढ़कर उसने उसमें कोई चूर्ण डाला—तुरत संगमरमर का पत्थर अपनी जगह नीचे गिर गया। उस पर भूमि भी पहिले की तरह आ गई।

अलादीन उस गुफ़ा में अकेला फँस गया। (अभी और है)

मित्र-संप्राप्ति

महिलारोप्य नगर कभी था
दक्षिण जनपद में मशहूर।
पास उसीके वृक्ष एक था
शाखा-पत्रों से भरपूर।

बरगद का वह वृक्षशिरोमणि
छूता था मानों आकाश।
पशुगण नीचे क्रीड़ा करते
ऊपर चिड़ियों का था वास!

उसकी डाली पकड़ पकड़कर
बंदर झूला करते नित्य,
फूलों का रस पी-पीकरके
भँवरे करते रहते नृत्य।

शाम-सबेरे विहग छेड़ते
बैठे उसपर मधुमय तान,
अग-जग को बेहोश बनाता
स्वर्गिक-सा लगता वह गान।

छिपे कोटरों में झिंगुर की
उठती रहती थी झनकार,
पथिक छाँह में अति सुख पाते
जब बरसाता रवि अंगार।

इस प्रकार वह सब अंगों से
देता था सबको आराम,
कौआ भी था एक उसी पर
लघुपतनक था उसका नाम।

एक दिवस जब चारा चुगने
निकला वह नगरी की ओर,
देखा उसने एक शिकारी
जाल लिये आता इस ओर।

लघुपतनक ने सोचा मन में
यह व्याध तो लगता क्रूर,
बरगद पर बैठे चिड़ियों को
पकड़ेगा ही आज ज़रूर!

श्री "भारतीभक्त"

बरगद पर के पक्षीगण तो
फटके नहीं ज़रा भी पास,
लघुपतनक ने मना किया था
फिर जाते कैसे वे पास!

लेकिन सहसा उस अवसर पर
आये यहाँ कपोत हज़ार,
राजा उनका चित्रग्रीव था
साथ लिये पूरा परिवार।

चित्रग्रीव की उन दानों पर
ललचायी-सी पड़ी निगाह,
लघुपतनक ने किया उसी क्षण
ख़तरे से उसको आगाह।

लेकिन लोभी चित्रग्रीव ने
दिया न उसपर बिलकुल ध्यान,
परिवारसहित जब फँसा जाल में
तब देखा 'आफत में जान!'

फँसे कपोतों को लख व्याध
ने डंडा निज लिया सँभाल,
जिसे देखकर सभी कबूतर
लगे सोचने—आया काल!

चित्रग्रीव ने कहा—"साथियो,
लो अब धीरज से सब काम,
लिये जाल हम उड़ जायेंगे
दूर करेंगे जा विश्राम!"
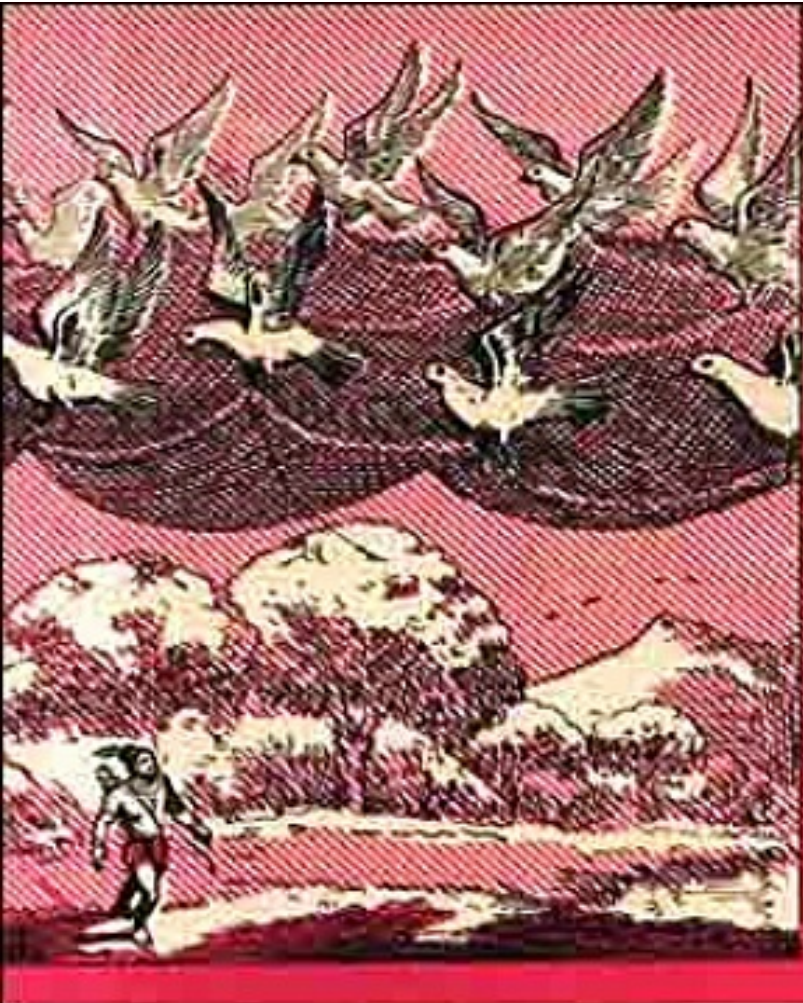
इसीलिए वापस आ उसने
किया पक्षियों को आगाह,—
"देखो, वह आता हत्यारा
जो यम-सा ही लगता आह!

फ़ैलाकर वह जाल यहीं पर
चावल देगा अभी बिखेर,
ज़हर मानना उन दानों को
लेना तुम निज आँखें फेर।"

इतने में आ धमका व्याध
फैलाया झट उसने जाल।
और छींट कर चावल उसपर
छिपा पास ही वह तत्काल।

उड़े शीघ्र तब सभी कबूतर
लिये जाल भी अपने साथ,
गये कबूतर, गया जाल भी—
रोया व्याध धुन धुन माथ !

हिरण्यगर्भ नामक चूहा था
चित्रग्रीव का गहरा मित्र,
चले कबूतर उसी दिशा को
जिधर बना था उसका दुर्ग।

हिरण्यगर्भ था बिल में बैठा
चित्रग्रीव ने दी आवाज,
सुनकर जिसको आ निकला वह
बोला—"यह क्या हालत आज?"

चित्रग्रीव ने कहा—"जीभ की
लालच का यह है परिणाम।
मित्र, न अब तुम देर लगाओ
काटो बंधन शीघ्र तमाम !"

सुनते ही यह हिरण्यगर्भ जब
हुआ काटने को तैयार,
बोल उठा तब चित्रग्रीव झट—
"पीछे मैं, पहले परिवार !

ये सब मेरे आश्रित हैं औ'
करते हैं मुझपर विश्वास,
मुक्त करो पहले इनको ही
फिर आओ मेरे भी पास।"
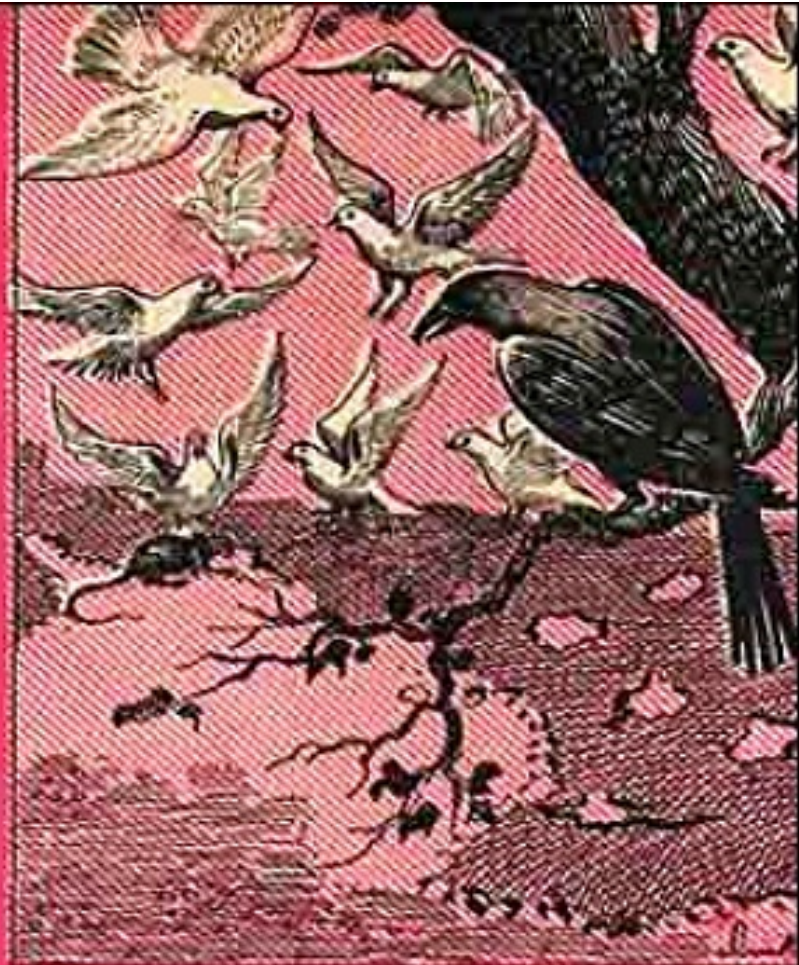
यह सुनकर खुश हुआ हिरण्यक
बोला—"मित्र, लिया पहचान,
राजा होने योग्य तुम्हीं हो
पाओगे जग में सम्मान।"

इतना कहकर उस चूहे ने
दिये सभी के बंधन काट।
और विदा ले बिल में पैठा;
गये कबूतर भी निज बाट।

लघुपतनक भी साथ लगा था
देखे उसने सारे खेल,
बुद्धिमान चूहे से उसने
ठानी तब करने की मेल !

चुगलखोर की गति

जब खरगोश कछुवे से हार गया तो उसकी अच्छी मिट्टी पलीद हुई। खरगोश कई दिनों तक सोचता रहा कि फिर कैसे खोई हुई प्रतिष्ठा पाई जाये।

वह अकेला बैठा इसी उधेड़ बुन में था कि उसे एक तरतीब सूझी। खरगोश झट खड़ा हो गया। "फिर एक बार लोमड़ी को चकमा देकर खोई कीर्ति पाऊँगा" वह जोर से चिल्लाया।

पास के एक पेड़ की टहनी पर बैठी एक चुगलखोर चिड़िया खरगोश को बहुत देर से देख रही थी। उसने उसकी ये बातें भी सुनी। "लोमड़ी से कहूँगी, लोमड़ी से कहूँगी।" कहती कहती, चिड़िया उड़कर चली गई।

खरगोश हैरान था। परेशान। क्या किया जाये, उसे समझ में न आया। यह सोचकर कि लोमड़ी की नजर में न आना ही अच्छा है, वह सीधे अपने घर चला गया।

खरगोश अभी थोड़ी दूर गया था कि उसे सामने से लोमड़ी आती दिखाई दी। तुरत खरगोश को कोई चाल सूझी। अभी लोमड़ी कुछ दूर ही थी कि वह कहने लगा—"क्यों भाई लोमड़ी मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? सुना है कि तुम कहते फिर रहे हो कि तुम मेरा और मेरे लोगों का सत्यानाश करदोगे! हम दोनों की दोस्ती भला कब टूटी है?"

लोमड़ी को बड़ा गुस्सा आया। उसने पूछा—"यह सब तुम से किसने कहा है?"

"इसमें क्या रखा है कि किसने बताया है। चिड़िया ने बताया था। कहना होगा

श्री सुमन कुमार जोशी

कि मुझे बड़ा गुस्सा आया। और मैंने गुस्से में कुछ का कुछ बक दिया। गनीमत कि तुम वहाँ न थे नहीं तो तुम्हें बड़ा दुःख होता।" खरगोश ने कहा।

"देख, मैं उस चिड़िया कि खबर लेता हूँ।" कहती कहती लोमड़ी आगे बढ़ी। थोड़ी दूर जाने के बाद, झाड़ी में से चिड़िया का पुकारना सुनाई दिया, "लोमड़ी भाई! लोमड़ी भाई! कहाँ जा रहे हो!" लोमड़ी ने उसकी न सुनी और आगे चलती गई।"

"लोमड़ी भाई! एक बात तो सुनते जाओ।" चिड़िया ने फिर कहा।

लोमड़ी ने तब भी न सुना। थोड़ी दूर जाकर वह इस तरह लेट गई जैसे सो रही हो। चिड़िया पास आकर फुदकने लगी। "लोमड़ी भाई, तुमसे एक बात कहनी है!"

"मुझे कुछ नहीं सुनाई दे रहा है। पास आकर बताओ।" लोमड़ी ने कहा।

चिड़िया उड़कर, लोमड़ी की पूँछ पर पंख फड़फड़ाने लगी।

"और थोड़ा पास आओ।" लोमड़ी ने कहा। चिड़िया ने लोमड़ी की पीठ पर आकर कहा—"यह नहीं लोमड़ी भाई...."

"और पास आओ।" लोमड़ी ने कहा—" चिड़िया ने लोमड़ी के पेट पर जाकर कहा—"देख लोमड़ी भाई...."

"देख मुझे कानों से नहीं सुनाई पड़ता है। मेरे मुँह पर आकर, कान में जोर से कह। "लोमड़ी ने कहा।

चिड़िया उसके मुँह पर गई। तब झट लोमड़ी ने मुँह खोला। और वह चिड़िया को निगल गया। और अपने रास्ते पर चला गया।

लालची कौआ

गंगा में बाढ़ आई। एक बड़े हाथी की लाश बही आ रही थी। एक कौआ उस लाश पर बैठ कर सोचने लगा—"अच्छी सवारी मिली है। इसमें बहुत-सा खाने को है। कितने ही दिन खाओ, तब भी खतम न हो।"

वह खाने में इतना मस्त था कि उसने आस पास के पेड़ पौधे भी न देखे। लाश बहती बहती आखिर समुद्र में चली गई।

समुद्र में, लहरें उस लाश को जाने कहाँ ले गईं। कहीं भी जमीन न दिखाई देती थी।

इस बीच लाश अस्थिपंजर मात्र रह गई थी और वह भी पानी में डूब रही थी।

तब जाकर कौए को अक्ल आई। वह उड़ने लगा। उड़ता गया, पर कहीं किनारा न दिखाई दिया। आखिर उसके पंख पस्त पड़ गये और वह समुद्र में गिरकर मर गया।

[४]

[भाललोचन के चुंगल से निकलकर, रूपधर और उसके सैनिक नौका द्वीप में पहुंचे। उस द्वीप के राजा चित्राश्व से उनको बहुत मदद मिली। उसने सब वायुओं को एक थैली में बाँधकर दिया। रूपधर की नौकायें स्वदेश पहुंचने को ही थी कि अन्तिम क्षण में सैनिकों ने थैली खोल दी। उन वायुओं के प्रभाव से नौकायें ध्रुव की ओर बह गयीं। वहाँ के राक्षसों ने रूपधर के सैनिकों और नौकओं को नष्ट कर दिया। केवल रूपधर की नौका ही उनके हाथों से बचकर निकल सकी]

रूपधर ने अपने बचे-खुचे सैनिकों के साथ फिर वापिसी यात्रा शुरू की। मौत के मुँह से निकला था, इसलिये वह बहुत खुश भी था पर साथ साथ दुःखी भी क्योंकि उसकी सब नौकायें नष्ट कर दी गई थीं और उसके सारे सैनिक मार दिये गये थे।

थोड़े दिनों बाद, रूपधर की नौका एक द्वीप में पहुँची। उस द्वीप में सुकेशिनी नाम की एक अप्सरा रहा करती थी।

[एक ग्रीक पुराण कथा]

उसके केश बहुत सुन्दर थे। यह सूर्य को, वरुण राजा की लड़की से पैदा हुई थी। वह मनुष्यों की भाषा बोलती थी, पर उसका स्वभाव उनका उपकार करने का न था।

रूपधर को इसके बारे में कुछ न मालूम था। उसने अपनी नौका को ऐसी जगह किनारे बाँध दिया, जो बन्दरगाह-सा था। दो रात और दो दिन उसने वहाँ काटे। दोनों दिन ग्रीकों ने निराशा और निरुत्साह में बिताये। उन्हें कुछ भी नहीं सूझा कि क्या किया जाये।

तीसरे दिन जब पूर्व में सूर्य उदय हो रहा था तो रूपधर अपनी तलवार और भाला लेकर एक ऊँची जगह पर गया। वहाँ से उसने चारों ओर देखा। उसे कोई न दिखाई दिया। पर दूर पेड़ों की झुरमुट में सुकेशिनी के घर से धुआँ ऊपर उठता दिखाई दिया। पहिले पहले रूपधर ने जाकर जानना चाहा कि उन पेड़ों के बीच में कौन रह रहा था। पर बाद में उसने सोचा कि नौका के पास जाकर भोजन करने के बाद किसी सैनिक को ही इस काम पर भेजना अच्छा होगा।

परन्तु खाने के लिए भी कुछ न था। वह यह सोचता हुआ अपनी नौका के पास जा रहा था कि मानों भगवान ने भेजा हो, उसे, रास्ते में एक हरिण दिखाई दिया। उसके सींग बड़े लम्बे थे। तब बहुत गरमी हो रही थी। पास वाले नाले में हरिण प्यास बुझाने जा रहा था।

रूपधर ने उसके पास जाकर उसे भाले से मारा। भाले की चोट से वह नीचे गिर गया और छटपटाकर मर गया। रूपधर ने कुछ बेलें इकट्ठी की. उनकी रस्सी बनाकर, उससे हरिण को गले में

बाँधकर, हरिण को पीठ पर डालकर झुका झुका वह नौका के पास धीमे धीमे गया। ऐसा इसलिये करना पड़ा क्यों कि हरिण बहुत भारी था।

उसने अपना शिकार नौका के पास डाल दिया। और अपने सैनिकों को जोश दिलाने के लिए वह यों कहने लगा:—
"दोस्तो! हम इतने में मरनेवाले नहीं हैं। हमारे लिये यम को अभी बहुत दिन प्रतीक्षा करनी होगी। जब तक आहार व पेय हैं, हमें खाना पीना छोड़ने की ज़रूरत नहीं। याद रखना, भूख से तड़प कर मरने की हमारी नौबत नहीं आई है।"

यह सुनते ही ग्रीक सैनिकों में उत्साह सा आ गया। उन्होंने अपने मुँह पर ओढ़े हुये कपड़े हटाये। खड़े होकर उन्होंने वह हरिण देखा, जो रूपधर मार कर लाया था। हाथ पैर धोकर वे हरिण के पकाने की तैयारी करने लगे। शाम तक वे खाते पीते रहे। उस रात को भी वे किनारे पर ही सोये।

अगले दिन सवेरे रूपधर ने अपने सैनिकों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा—

"हमारे लिए यह देश नया है। हम यहाँ यह भी नहीं जानते कि किस तरफ़ पूर्व है और किस तरफ़ पश्चिम। इस हालत में, हमें अब क्या करना चाहिये, मुझे तो कुछ सूझ नहीं रहा है। पर हाथ पर हाथ रखकर बैठ भी नहीं सकते हैं। कुछ न कुछ तो करना ही होगा। मैंने अभी पासवाले टीले से चारों ओर देखा। यह एक द्वीप है। जहाँ तक नज़र जाती है, वहाँ तक इसका कोई दूसरा छोर नहीं दिखाई देता। द्वीप में खास बड़े पहाड़-पर्वत भी नहीं हैं। द्वीप के बीच में एक ऐसी जगह

सरदार बना। और दूसरे गुट का उसने साहसी मायावी को सरदार बनाया। वहाँ कौन जाये, यह जानने के लिए दोनों गुटों ने मुहर उछाली। मायावी का गुट हारा। उसे जाना पड़ा। तुरत मायावी अपने बाईस सैनिकों को लेकर कोसता कुढ़ता उस तरफ़ निकला।

थोड़ी दूर जाने के बाद, उसे एक नीची जगह पर सुकेशिनी का घर दिखाई दिया। घर अच्छे पत्थरों से बनाया गया था। उसके चारों ओर बड़ा अहाता था। घर के चारों ओर भेड़िये, शेर वगैरह जंगली जन्तु थे। ये वस्तुतः जानवर न थे। मनुष्य ही थे। सुकेशिनी ने इधर उधर की चीज़ें खिलाकर मनुष्यों को जानवर बना दिया था। इसलिये उनका मायावी के आदमियों पर हमला करना तो अलग, कुत्तों की तरह दुम हिलाते हिलाते वे उनके पास आये। ग्रीक क्योंकि उन्हें जानते न थे, इसलिये उन्हें देखकर वे डर गये।

घर के पास न जाकर बाहर के फाटक के पास खड़े होकर ही उन्होंने इधर उधर देखा भाला। अन्दर करघे पर सुकेशिनी कुछ बुनती गा रही थी। उसका गाना उन्हें

है, जहाँ बहुत से पेड़ पौधे हैं। न मालूम वहाँ कौन है क्योंकि मैंने वहाँ से धुँआ उड़ता देखा था।

यह सुनते ही रूपधर के सैनिकों का उत्साह ठंडा पड़ गया क्योंकि इन परिस्थितियों में वे एक बार भाललोचनों के हाथ में पड़ गये थे। और फिर एक बार नरभक्षक राक्षसों के चुंगल में फँसे थे। वे अपने दुःख को काबू में न रख सके और रोने लगे।

फिर रूपधर ने अपने सैनिकों के दो गुट बनाये। एक गुट का तो वह स्वयं

सुनाई दिया। उनमें से एक ने कहा " मित्रो अन्दर कोई स्त्री बहुत ही मधुर संगीत गा रही है। या तो वह कोई स्त्री है, नहीं तो कोई अप्सरा है। आओ, उससे बातचीत करें। हिचकने की क्या बात है?"

तुरत सबने गला फाड़कर अन्दर की स्त्री को बुलाया। सुकेशिनी बाहर गयी। आये हुए लोगों को देखकर उसने उनको अन्दर निमन्त्रित किया। परन्तु मायावी ने उसे देखते ही सोचा कि ज़रूर दाल में काला है। इसलिए वह बाहर ही खड़ा रहा।

जो जो उसके साथ गये थे उन सब को सुकेशिनी ने स्वादिष्ट खाने की चीज़ें व पेय दिये। परन्तु उन चीज़ों में उसने कुछ जड़ी बूटियों का रस भी मिला दिया था। ग्रीक उन चीज़ों को खाते ही दुनियाँ को भूल-से गये। फिर उसने जादू के डंडे से एक एक को छुआ, तुरत वे सब सूअर हो गये और चिलाने लगे। उनका कलेवर तो बदल गया था। पर उनका मन बिल्कुल न बदला था। सुकेशिनी ने उन सूअरों को एक सुअरों के बाडे में हाँक दिया। वे उस कैदखाने में वही खाने लगे, जो सूअर खाते हैं।

सुकेशिनी के जादू से बचकर, मायावी नौका के पास गया। बहुत देर तक उसके मुँह से बात ही न निकली। उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लगी हुई थी। रूपधर आदि, के बहुत कुछ पूछने पर उसने जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

"आपकी आज्ञा के अनुसार हम उस तरफ़ गये। वहाँ ढ़लान पर एक सुन्दर पत्थर का मकान दिखाई दिया। अन्दर कोई स्त्री कुछ बुनती, गा रही थी।

हमने उसे बुलाया। वह आकर सबको अन्दर बुला ले गई। मैं यह सोचकर कि वह

कुछ धोखा न दे, बाहर ही खड़ा रहा। फिर जो अन्दर गये उनका पता ही न लगा।

रूपधर ने यह सुनते ही, अपनी बड़ी तलवार, चान्दी के मूठवाली, पीतल की तलवार, बाण उठाकर कहा—"मुझे रास्ता दिखाओ। मेरे साथ आओ।" मायावी उसके पैरों पर पड़कर कहने लगा—"मुझे वहाँ न बुलाइये। आपको लाख लाख सलाम। मैं यहीं रहूँगा। आप वापिस न आयेंगे। मैं जानता हूँ। मैं अगर आपके साथ गया तो मेरी भी वही गति होगी। अगर आप चाहते हैं कि आप, मैं, और ये कुछ दिन ज़िन्दा रहें, तो उस मनहूस घर के पास मत जाइये। आइये, यहाँ से जायें।"

"अच्छा! मायावी! जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। तुम यहीं नौका के पास रहो। खाओ, पिओ। मैं जाऊँगा, जाकर रहूँगा।" रूपधर ने कहा।

वह ढलान तक पहुँचकर, सुकेशिनी के घर की ओर देख ही रहा था कि उस समय एक युवक ने उसके सामने आकर खड़े होकर कहा—"अरे, अफ़सोस, फिर आ रहे हो! जानते हो, वह मकान जो दिखाई दे रहा है, वह सुकेशिनी का है। तुम्हारे आदमी सब सूअर बना दिये गये हैं, और क़ैद में बन्द हैं। क्या तुम भी उनमें मिलना चाहते हो! फिर भी कोई बात नहीं। जैसा मैं कहूँ, वैसा करो। मैं तुझे एक बूटी देता हूँ। सुकेशिनी तुझे पेय में दवा मिलाकर देगी। इस बूटी के प्रभाव से उस पेय का तुम पर कोई असर न होगा। वह फिर तुम पर जादू का डँडा रखेगी। तुम तुरत तलवार निकालकर, ऐसा दिखाओ, जैसे तुम उसे मारना चाहते हो! वह डर जायेगी, और कहेगी कि तेरी पत्नी होकर

रहेगी। तू यह स्वीकार कर सकता है। परन्तु पहिले ही उससे देवताओं के नाम पर शपथ करवाओ और वचन लो कि वह तुम्हारी कोई हानि न करेगी।" उस युवक ने ज़मीन से बूटी उखाड़कर उसे दी। उस बूटी की जड़ काली थी। परन्तु उनका फूल बिल्कुल सफ़ेद था।

युवक के चले जाने के बाद रूपधर उधेड़बुन में फँसा। वह सोचता सोचता, सुकेशिनी के घर पहुँचा। उसने आवाज़ लगायी। तुरत सुकेशिनी ने आकर दरवाज़ा खोला। वह उसके साथ अन्दर गया। पर उसका दिल धड़-धड़ कर रहा था।

उसने उसे एक सुन्दर कुर्सी पर सादर बिठाया। अन्दर जाकर, दवा मिली हुई पेयों को लाकर उसने उसके सामने रखा। रूपधर ने उन्हें पी लिया। पर उस बूटी के कारण उस पर कोई असर न हुआ। सुकेशिनी यह न जानती थी। उसने जादू का डँड़ा दिखाते हुए कहा—"सूअरों के बाड़े में, जो तेरे सैनिक हैं, उनसे जा मिल।"

तुरत रूपधर तलवार निकालकर उसकी ओर लपका। वह भय से काँपने लगी।

उसके पैर पकड़कर कहने लगी—"तुम कौन हो? इस विशाल संसार के किस प्रान्त से आ रहे हो? तुम्हारा कौन-सा शहर है? तुम्हारे माँ-बाप कौन हैं? मेरे पेयों के बाद भी न बदलना मामूली आदमियों के बस में नहीं है। तुम ज़रूर रूपधर हो। देवताओं ने मुझे पहिले ही बता रखा है कि रूपधर मुझे देखने आयेगा। हम दोनों का वैर अच्छा नहीं। उस तलवार को रख दो। आओ, मुझसे विवाह करो। हम दोनों आराम से रहें।"

"तूने मेरे सैनिकों को सूअर बनाकर कैद कर लिया है, तब तेरी मेरी कैसे पटेगी! मुझे भी सूअर बनाना चाहा और जब न बना तो शादी करने के लिए कहती हो। अगर तुम यह शपथ करो कि तुम मेरा कोई नुकसान न करोगे तब मैं तुमसे शादी करूँगा।" रूपधर ने कहा।

सुकेशिनी ने शपथ ली। फिर उसकी दासियों ने रूपधर को नहलाया-धुलाया। उसे और अपनी मालकिन को भोजन परोसा। परतु रूपधर ने वह भोजन न खाया।

"क्यों सन्देह कर रहे हो! शायद सोच रहे हो कि मैं फिर धोखा दूँगी। शपथ की थी न कि मैं कुछ नहीं बिगाड़ूँगी।" सुकेशिनी ने कहा।

"जब मेरे सैनिक सूअर के रूप में हैं, तब मैं यह खाना कैसे खा सकता हूँ! जब तक उनको मामूली मनुष्य बनाकर मेरे सामने हाज़िर नहीं करते, तब तक मुझे शान्ति न मिलेगी।" रूपधर ने कहा।

सुकेशिनी अपने जादू के डंडे को लेकर उठी और रूपधर के सैनिकों को मामूली आदमी बनाकर अपने साथ ले आई।

रूपधर को देखते ही उनके सन्तोष की सीमा न रही। उनमें से कई आनन्द के कारण आँसू बहाने लगे।

सुकेशिनी ने रूपधर के पास आकर कहा—"जैसा मैं कहूँ, वैसा करो। समुद्र के किनारे जाओ। अपनी नौका को किनारे पर लगाओ। अपना समान-असबाब एक गुफ़ा में रखो। फिर अपने बाकी सैनिकों को लेकर यहाँ चले आओ।" रूपधर उसके लिए मान गया।

(अभी और है)

खोया हुआ समय

किसी देश का कोई राजा था। वह एक दिन शिकार खेलकर अपने नौकर-चाकरों के साथ जा रहा था। उसे रास्ते में एक बुढ़िया अपने लड़के को डाँटती-डपटती नजर आई।

राजा ने अपना घोड़ा थामकर पूछा—"दादी, इस लड़के को क्यों यों डाँट रही हो?"

"जब कोख फलनी ही थी तो क्या ऐसा बावला लड़का पैदा होना था। यह कुछ भी समझता-भालता नहीं, कुछ कहो और कुछ करता है। दिक आई हुई हूँ।" बुढ़िया ने कहा।

राजा ने अपने नौकरों से थोड़ी देर बात की फिर उसने बुढ़िया से कहा—"मैं तेरे लड़के को सुधार कर अपनी नौकरी में रखूँगा, क्या तुम उसे मेरे साथ भेज सकोगी?"

"और भला मैं क्या चाहूँगी! ले जाओ।" बुढ़िया ने कहा।

उस बुढ़िया के लड़के का नाम बाबा था। उसे हमेशा सताकर अपना मनोरंजन करने के लिए ही राजा और उसके नौकरों ने यह चाल चली थी।

बाबा जब से आया था, तब से राजा के घर में कभी ऐसा वक्त न आया, जब वे खुश न हों—क्योंकि बाबा को तंग करके सब अपना मन बहलाव करते। "अरे, सफ़ेद कौवे के पंख चाहिए। जा, फ़ौरन ला।"—या "अरे, हरे मन्दार का फूल ला।" इस तरह के बेमतलब के कामों पर उसे इधर उधर दौड़ाते।

गायत्री देवी

बाबा को न मालूम होता कि वे उसे चिढ़ा रहे थे। वह काम करने भागता, दौड़ धूप करता और खाली हाथ वापिस आता। उसको देखकर वे हँसते हँसते लोटपोट हो जाते।

न हँसनेवाली सिर्फ़ दीदी थी। वह राजा के रसोई घर में काम किया करती थी। उम्र में वह बाबा से कुछ छोटी थी। बहुत सीधी-सादी थी। और खुबसूरत भी।

वह उसकी परवाह करती। उसे खूब खिलाती-पिलाती। "तुझे कुछ नहीं आता जाता। जो कुछ वे कहते हैं, तुम करने के लिए भागते हो। तुझे तंग करने के लिए वे काम बताते है। जब कभी, जो कोई तुझे बाहर काम पर भेजे, तो पहिले मुझसे कहते जाना।" उसने बाबा को सलाह दी।

इसके बाद, जब कोई बाबा को कोई काम करने के लिए कहता तो वह दीदी की सलाह लिया करता और जो वह कहती, वह करता।

साधारणतया, राजा सूर्योदय के समय उठा करता। एक दिन वह एक घंटा देर से उठा। अपने कमरे से बाहर आकर उसके लिए प्रतीक्षा करते हुए लोगों से उसने कहा—"आज, लगता है मेरा एक घंटा समय चला गया है!"

तुरत बाबा ने पूछा—"तो क्या मैं खोजकर लाऊँ?" सब ठहाका मारकर हँसे। राजा न हँसा। उसने कहा—"अच्छा, जो घंटा भर समय चला गया है, उसे पकड़ ला।"

बाबा को देखकर दीदी को तरस आई। उसने कहा—"क्या कभी वह समय जो चला जाता है वापिस आता है? शाम

को राजा के पास जाकर कहना कि कहीं दिखाई नहीं दिया है।"

बाबा ने जिद पकड़ते हुए कहा—"जो चीज़ खोई जाती है वह ज़रूर मिलती है! राजा के कहने से पहिले ही मैंने कह दिया था कि मैं खोज कर लाऊँगा। जाकर लाना ही होगा।"

पागल से बहस करने से क्या फायदा! इसलिए दीदी ने एक लम्बी साँस छोड़ी और बाबू को भोजन परोसा।

बाबा ने जल्दी जल्दी खाना खाया। और राजा के पास जाकर कहा—"मैं जाने के लिए तैयार हूँ।

राजा ने किसी दरबारी के एक लँगड़े घोड़े को उसे दिया। किसी और की जंगवाली तलवार दी। तलवार लेकर, लँगड़े घोड़े पर सवार होकर जब बाबा जा रहा था तो राजा और दरबारियों ने अट्टहास किया।

बहुत दूर जाने के बाद सामने से एक बूढ़ा आता हुआ दिखाई दिया।

"बाबू, मैं एक घंटे समय की खोज में निकला हूँ, जो चला गया है। क्या

तुम्हें वह कहीं दिखाई दिया?" बाबा ने पूछा।

बूढ़े ने कहा—', तेरे एक घंटे समय की कीमत भी क्या है! मेरी प्रतिष्ठा चली गयी है। मैं उसकी खोज में देश देश दर दर भटक रहा हूँ। क्या तुझे मेरी प्रतिष्ठा दिखाई दी थी?"

बाबा ने कहा कि उसे वह न दिखाई दी थी। वह आगे बढ़ गया। थोड़ी दूर जाने के बाद उसे एक हट्टा कट्टा तमतमाता व्यक्ति तेज़ी से आता दिखाई दिया। उसकी आँखें अंगारे हो रही थीं।

"बाबू, क्या आपको कहीं खोया हुआ समय दिखाई दिया है!" बाबा ने उससे सविनय पूछा।

उस व्यक्ति ने गरमाते हुए कहा—"मुझे तेरे समय से क्या वास्ता? मैं अपनी सहनशक्ति खो बैठा हूँ। बहुत खोजा, कहीं न मिली। क्या तुम्हें कहीं दिखाई दी?"

"नहीं तो!" बाबा ने डरते हुए कहा—

"यही बात थी तो तुमने मुझे क्यों रोका?" वह व्यक्ति, अपने डंडे से बाबा को खूब पीटकर चला गया। यह देख बाबा का लंगड़ा घोड़ा बिदक उठा। और उसने दौड लगाई। वह थोड़ी देर बाद समुद्र के किनारे वाले जीजी नगर में पहुँचा।

बाबा ने सीधे राजा के पास जाकर कहा—"मैं उस समय की खोज कर रहा हूँ, जो हमारे राजा खो बैठे हैं। क्या आप मेरी मदद कर सकेंगे?"

राजा की आखों में तरी आ गई। उसने कहा—"भाई मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ। पन्द्रह वर्ष पहिले मेरी लड़की

कहीं चली गई। बहुत ढूँढा पर वह कहीं न मिली। जब तुम अपने समय को खोजो। तो जरा उसको भी खोजना।"

"बहुत अच्छा।" कहकर, बाबा वहाँ से आगे चला गया।

समुद्र के किनारे बाबा को एक नाव दिखाई दी। उसमें मल्लाह माल चढ़ा रहे थे। बाबा ने उनके पास जाकर खोये हुए समय के बारे में पूछा।

"अगर वह कहीं मिलेगा तो समुद्र में ही मिलेगा। चाहते हो तो हमारी नाव पर चढ़कर चले चलो।" मल्लाहों ने कहा।

मल्लाह जान गये थे कि उस अनाड़ी से सब काम करवाये जा सकते थे।

बाबा को उनकी बात पर विश्वास हो गया। वह उनके साथ नौका पर चढ़कर निकल पड़ा। समुद्र में बड़ा तूफ़ान आया, और नाव किसी पहाड से टकरा कर चूर चूर हो गई। सिवाय बाबा के सब मर मरा गये। समुद्र की लहरें उसे एक विचित्र द्वीप में ले गईं।

उस द्वीप में समय देवता रहा करता था। जहाँ कहीं बाबा उस द्वीप में जाता। सिवाय काले पत्थरों के ढेर के उसे कुछ

न दिखाई देता। उन ढेरों के बीच वह रात भर घूमता रहा। सूर्योदय के समय उसने एक आश्चर्यजनक घटना देखी।

बाबा के सामने ही एक किला था। उसके देखते देखते उस किले के फाटक खोलकर एक सफ़ेद दाढ़ीवाला बूढ़ा निकला। उसके साथ सफ़ेद कपड़े पहिने एक नवयुवक घोड़े पर सवार होकर खड़ा था। उसके चारों ओर साठ लड़के ठीक उसकी तरह सफ़ेद कपड़े पहिने सफ़ेद छोटे घोड़ों पर सवार होकर जाने के लिए तैयार थे।

बूढ़े के ईशारा करते ही, घुड़सवार बाण की गति से बाबा की बगल में से गुजरे। बाबा ने आगे बढ़कर बूढ़े के पास जाकर पूछा "आप कौन हैं? और ये सब कौन हैं? यह कौन-सा देश है?

"मैं समय देवता हूँ। यह मेरा निवास स्थल है। अब जो नवयुवक गया है वह प्रथम घंटा है। उसके साथ गये हुए निमिष हैं।" वृद्ध ने कहा।

यह सुनते ही बाबा को वह काम भी याद आया, जिस पर वह निकला था। "हमारे राजा ने कहीं एक घंटा समय खो दिया है। उसे ढूंढ लाने के लिए मुझे भेजा है। क्या आप मेरी मदद कर सकेंगे?" उसने समय देवता से पूछा।

"हाँ, यह तो मेरे हाथ में है। आओ, बेटा।" समय देवता ने कहा।

अन्दर एक बड़ा महल था। उस महल में घंटे और निमिष थे। रात के घंटो ने काले लिबास पहिन रखे थे और दिन के घंटो ने सफ़ेद कपड़े।

समय देवता समय के अनुसार घंटे और निमिषों को भेजता रहता। यही यहाँ का कार्यक्रम था।

सबने बाबा के प्रति आदर भाव दिखाया। समय देवता की आज्ञा पर उन्होंने बाबा को ठीक कर दिया। वह अक़्लमन्द हो गया। ऐसी कौन सी चीज़ है, जो समय न कर सकता हो।

बाबा वहाँ कुछ समय तक रहा। फिर उसने समय देवता से कहा—"महाराज! अब मुझे भेज दीजिये।"

समय देवता ने बाबा को एक छोटी-सी डिबिया देते हुये कहा—"वह घंटा जो तुम्हारा राजा खो बैठा था, इसमें है। जब तक ज़रूरत न पड़े तब तक इस डिबिया का ढकन न खोलना।"

"....महाशय! जब मैं आ रहा था, तो मुझे एक बूढ़ा मिला। उसने बताया कि वह अपनी प्रतिष्ठा खो बैठा था। उसको ढूँढ़ता ढूँढता वह देश देश में भटक रहा था, क्या आप बता सकेंगे कि उसकी प्रतिष्ठा क्या हुयी।" बाबा ने पूछा।

"उसे, उसके अड़ोस पड़ोस के लोग, टुकड़े टुकड़े करके ले गये हैं और उसे कहीं छिपा दिया है—उन टुकड़ों को लाकर जोड़ने के लिये कहो।" समय देवता ने कहा।

"एक हट्टे कट्टे आदमी ने अपनी सहन शक्ति खो दी है। वह कहाँ गई है, क्या आप बता सकेंगे!" बाबा ने पूछा।

"जहाँ तू उससे मिला था, उससे तूने बातचीत की थी, उसी जगह घास में, वह गिर गयी है। वह अमरूद जितनी बड़ी है। और सफ़ेद है।" समय देवता ने कहा।

"जीजी राजा की लड़की छुटपन में ही कहीं चली गई थी। उस लड़की का ठिकाना भी कृपया बताकर पुण्य कमाइये।" बाबा ने कहा।

"तुम उस लड़की को खूब जानते-पहिचानते हो। उसका नाम दीदी है। और वह तुम्हारे राजा के यहाँ काम कर रही है।" समय देवता ने कहा।

बाबा समय देवता को प्रणाम करके वापिसी यात्रा के लिये तैयार हुआ। ठीक उसी समय दुपहर का घंटा और उसके निमिष निकल रहे थे, वे उसे साथ ले गये। उन्होंने उसे रास्ते में छोड़ दिया—वह ऐसी जगह उतरा जहाँ उसे हट्टाकट्टा आदमी मिला था।

पास ही, घास में उसको अमरूद के बराबर, समय देवता के कथनानुसार सहन शक्ति मिली। परन्तु वह हट्टाकट्टा आदमी कहीं न दिखाई दिया।

वहाँ से बाबा जीजी नगर गया और वहाँ के राजा से उसने कहा—"मैंने आपकी लड़की के बारे में मालूम कर लिया है। कुछ नौकर-चाकरों को लेकर आप मेरे साथ आइये।"

जीजी के राजा को बड़ी खुशी हुयी। उसने कई रथों की व्यवस्था की। बाबा को एक रथ में उसने अपने साथ बिठाया। नौकर-चाकरों को साथ लेकर निकल पड़ा। जब सब बाबा के शहर में

गये। शहर मातम मनाता-सा लगा। लोग कानों में कुछ बातें कर रहे थे।

बाबा राजमहल में गया। उसने राजा से पूछा—"जहाँ देखो लोग दुखी खड़े हैं, क्या बात है!" राजा ने निश्वास छोड़ते हुये कहा—"क्या कहूँ! कल यहाँ एक राक्षस आया। उसने रसोई करनेवाली एक लड़की मांगी। राक्षसों की रसोई करने के लिये कौन मानेगा! कोई न माना। राक्षस को गुस्सा आया। उसने कहा कि अगर तुमने शाम तक रसोई करनेवाली को न भेजा तो सारा शहर नष्ट कर दूँगा। यह जानकर, दीदी ने राक्षस की नौकरी करना स्वीकार कर लिया, ताकि नगर की रक्षा हो सके। अभी, अभी, सूर्यास्त होने से कुछ देर पहिले ही वह यहां से चली गई।"

बाबा झट उठ खड़ा हुआ। उसने पश्चिम के आकाश की ओर देखकर कहा—"सूर्यास्त हुए अभी एक घंटा नहीं हुआ है। इस घंटे को पीछे करके दीदी को यहाँ लाने का प्रयत्न करता हू।" कहते हुए उसने डिबिया का ढकन खोल दिया।

तुरत चौंधियानेवाला प्रकाश हुआ। उसके बाद समय एक घंटा पीछे हट गया।
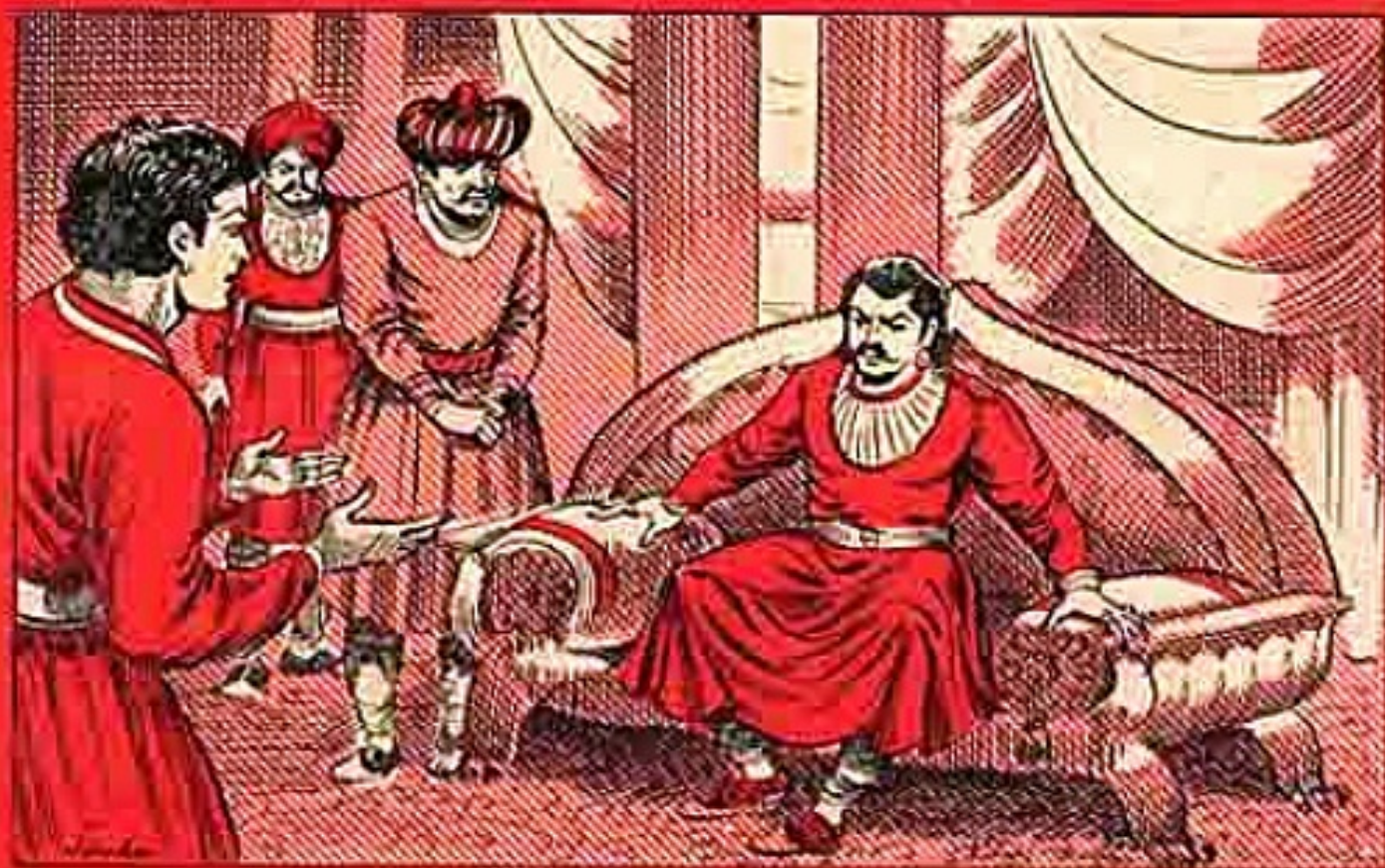
पश्चिम की ओर सूर्य अस्त होनेवाला था। दीदी राक्षस के पास जाने को तैयार थी।

बाबा ने उसका हाथ पकड़कर कहा—"दीदी देखो, ये हैं तुम्हारे पिताजी—जीजी देश के राजा।"

जीजी के राजा ने अपकी लड़की को गले लगा लिया। आनन्दाश्रु बहाये। सब दीदी के बारे में मालूम करने में मशगूल थे कि अन्धेरा हो गया।

रसोई करने के लिए किसी को भेजा न गया था। इसलिए राक्षस गुस्से में उबलता-सा आया।

"उसकी खबर मैं लूँगा। आप लोग न घबराये।" कहता हुआ बाबा तल्वार निकाल कर उसकी ओर लपका। राक्षस मुख खोलकर, हाथ फैलाकर, बाबा को पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। उसको उसने पास आने दिया। जब वह पास आगया तो बाबा ने अपने पास की सहन शक्ति को उसके खुले मुख में डाल दिया।

तुरत राक्षस में बड़ा परिवर्तन हुआ। उस सहन शक्ति को निगल कर बाबा को देखकर, उसने अट्टहास करके कहा—"गुस्सा न करो, अच्छा जाता हूँ। नमस्ते।" सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर वह जिस रास्ते आया था उस रास्ते चला गया।

जीजी के राजा ने बाबा से कहा—"बेटा मेरे कोई लड़का नहीं है। तुमने मेरी लड़की मुझे दिलवायी है। हम तुम्हारा ऋण नहीं चुका पायेंगे। तुम हमारे देश आओ। हमारी लड़की से विवाह करके, हमारे बाद राज्य करो।"

बाबा मान गया। उसका और दीदी का बड़े वैभव के साथ विवाह हुआ।
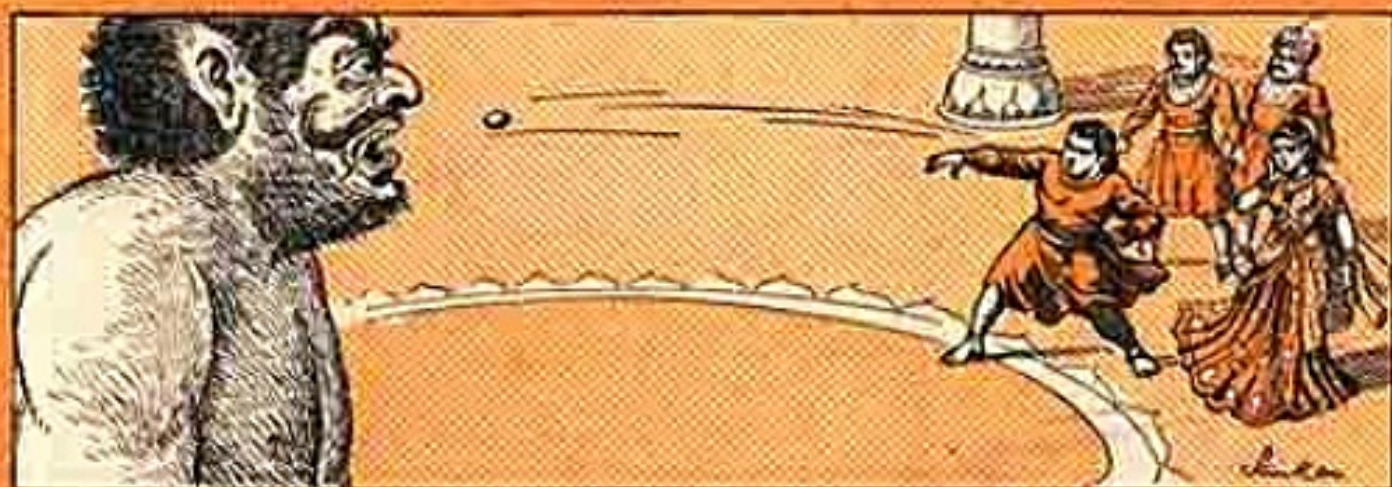
सपना सच निकला

इन्द्रप्रस्थ नगर में एक बड़ा रईस रहा करता था। उसने ऐश आराम में समय बिताया। फिर भाग्य ने साथ न दिया। उसकी सारी सम्पत्ति चली गई। जो कभी अमीर था गरीब हो गया।

जब वह इस हालत में था तो उसे सपना आया। सपने में महाविष्णु ने प्रत्यक्ष होकर कहा—"तुम तुरत पाटलीपुत्र जाओ। वहाँ तुम्हें पैसा मिलेगा। उसको पाकर तुम फिर अमीर हो जाओगे।"

सपने में, महाविष्णु की कही हुई बात पर उसको विश्वास हो गया। वह अकेला पाटलीपुत्र के लिए निकल पड़ा। कई दिनों की यात्रा के बाद वहाँ पहुँचा। यूँ तो पाटलीपुत्र उसके लिए नया था, तिस पर अन्धेरा हो गया था। कृष्ण पक्ष की रातें थीं। आकाश में चान्द भी न था। वह जैसे तैसे एक मन्दिर में पहुँचा। और मंडप में सो गया। सारा नगर सो गया था। मन्दिर के पासवाले घर में चोर घुसे। घर का मालिक चोरों की आहट सुनकर, "चोर, चोर," जोर से चिल्लाने लगा। देखते देखते आस-पड़ोस के लोग वहाँ आगये।

चोर दीवार पर से मन्दिर के आंगन में कूदे। मण्डप की बगल में से वे अन्धेरे में कहीं नौ दो ग्यारह हो गये। लोग ढूँढते ढूँढते मन्दिर के आंगन में आये। आखिर वे मण्डप में सोये हुये परदेशी को उठाकर कोतवाल के पास ले गये।

लम्बी यात्रा के कारण परदेशी धूल धूसरित तो था ही, वह कोतवाल को चोर सा ही लगा। उसने अपने सिपाहियों से

श्री अमरनाथ पाण्डेय

परदेशी को खूब पिटवाया। "सच बताओ तुम कौन हो? क्यों चोरी करने आये थे?" उन्होंने उससे पूछा।

"हुजूर, मैं चोर नहीं हूँ। मैं इन्द्रप्रस्थ का रहनेवाला हूँ। मैं कभी अच्छा अमीर था। भगवान ने मुझे दो बार धोखा दिया। पहिले उसने मेरा सारा धन ले लिया। उसको इससे भी तसली न हुई। श्रीमन्नारायणमूर्ति के रूप में प्रत्यक्ष होकर उसने मुझे पाटलीपुत्र जाने के लिए कहा और बताया कि मुझे वहाँ फिर पैसा मिलेगा। इस बात पर विश्वास कर इन्द्रप्रस्थ से पैदल चलता आज रात यहाँ पहुँचा हूँ। और अब आप से मार खा रहा हूँ।" परदेशी ने कहा।

यह सुन कोतवाल ने कहा—"अरे, पागल कहीं कोई सपनों का विश्वास करता है? थोड़ी देर पहिले मुझे भी सपने में श्रीमन् नारायणमूर्ति ने प्रत्यक्ष होकर कहा कि तुम्हारे इन्द्रप्रस्थ में ही तुम्हारे घर के पीछे, फलाने पेड़ के नीचे खजाना है। उसको खोदकर निकाल सकते हो। मैं उसकी बात पर विश्वास कर इन्द्रप्रस्थ नहीं गया। इसलिये सपनों पर यकीन करने का पागलपन छोड़ दो और तुम इन्द्रप्रस्थ वापिस चले जाओ।" कोतवाल ने सलाह दी।

वह गरीब, जो कभी धनी था, तुरत इन्द्रप्रस्थ की ओर निकल पड़ा। उसने कोतवाल की कही बात पर एक पेड़ के नीचे खोदा और सचमुच उसे उसके नीचे बहुत बड़ा खजाना मिला। उस खजाने के कारण वह फिर धनी हो गया।

इस तरह उसका सपना सच निकला।

SATYAM

दीपावली की घटना

दीपावली के लिए बहिन और जीजा आये।

पटाके खरीदकर देने के लिए जीजा, राजा को साथ लेकर बाजार गये। "आते समय, जरा मेरे लिए फूल भी लेते आना।" बहिन ने पति से कहा।

जब तक जीजा के पैसे ख़तम न होगये तब तक राजा ने उनसे पटाके खरीदवाये। जब उन्हें वह थैले में डालकर घर आ रहा था तो उन्हें फूल बेचनेवाली दिखाई दी।

जीजा ने जेबें टटोलीं, पर जेबें खाली थीं।

"पटाके लेकर क्या फूल दोगी?" जीजा ने पूछा। फूल बेचनेवाली मान गई।

"राजा, थैले में रखे पटाके इसको दे दे। फिर आकर पटाके खरीदेंगे।" जीजा ने कहा। राजा मन मसोसकर रह गया।

पटाके देकर फूल लेकर दोनों चले गये। थोड़ी दूर जाने के बाद राजा ने कहा—"जीजाजी, मेरा रुमाल गिर गया है। मैं ले आता हूँ। आप चलते रहिये।" कहता वह फूलों की थैली लेकर पीछे की ओर दौड़ा।

फूल बेचनेवाली दिखाई दी। "....तुम अपने फूल ले लो और मुझे मेरे पटाके दे दो। अगर चूँचाँ की तो पोलीस में शिकायत कर दूँगा।" राजा ने कहा।

फूल बेचनेवाली ने पटाके दे दिये और फूल ले लिये।

घर आने पर बहिन ने पति से पूछा—"फूल लाये कि नहीं?"

"राजा ला रहा है।" जीजा ने कहा।

पर जब राजा आया तो थैले में केवल पटाके ही थे, फूल न थे। बहिन आगबबूला हो गई....और, जीजा का मुँह देखते ही बनता था।

(साथ का पृष्ट देखिये)

?
SATYAM
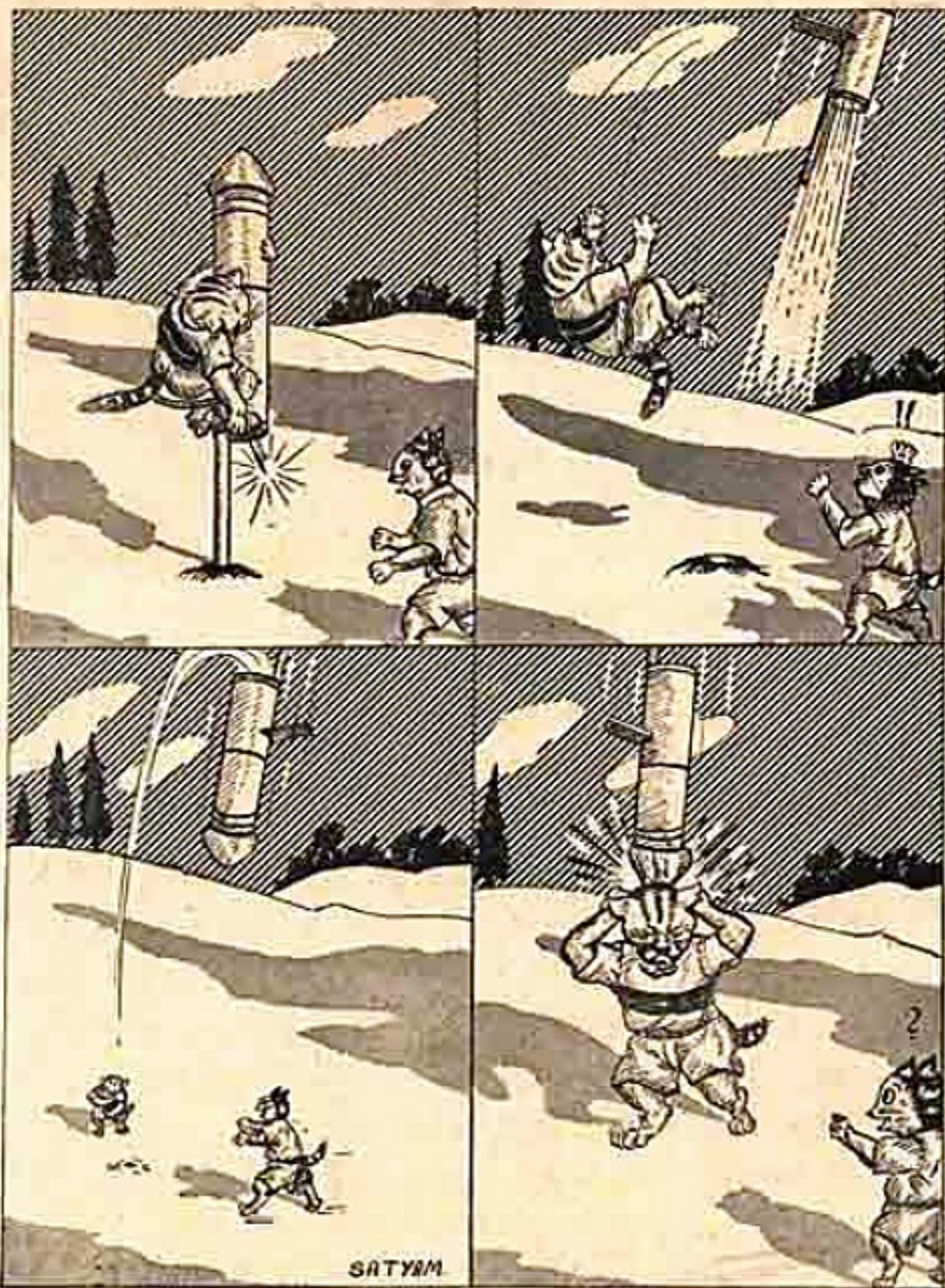
अजीब व्यापारी

कैरो शहर में मारूफ़ नाम का एक नौजवान रहा करता था। वह गरीब और ईमानदार था। पुरानी चप्पलों की मरम्मत करके रोज़ी किया करता था।

उसकी पत्नी भी थी। नाम उसका फातिमा था। वह बड़ी चुड़ैल थी। मुँहफट्ट भी। वह पति को खुश तो क्या रखती, दिन रात जली-कटी सुनाती रहती। वह ज़िन्दगी से ही ऊब गया।

मारूफ़ इज्ज़त के साथ ज़िन्दगी बसर करना चाहता था। छोटी छोटी बात पर होहल्ला करना उसे पसन्द न था। इसलिये जो कुछ वह कमाता, पत्नी केलिए ही खर्चता। अगर कभी वह ग़ल्ती से घर पैसे न लाता तो उसकी पत्नी आसमान उठा देती और उसे चैन से न रहने देती।

एक दिन फातिमा ने पति से कहा—"आज शाम को घर आते समय, खूब शहद लगाकर मीठी रोटी लेते आना।" मारूफ़ ने कहा—"अगर खुदा ने दो चार पैसे दिये तो ज़रूर लाऊँगा। इस समय मेरे पास कानी-कौड़ी भी नहीं है।"

"इसमें खुदा की मेहरबानी क्या है! अगर आज तुम मेरे लिए शहद की रोटी न लाये तो जान लो कि फाके करने पड़ेंगे।" चुड़ैल ने कहा।

मारूफ़ यह चाहता चाहता कि खुदा उसे पैसे दें अपनी दुकान पर गया। परन्तु, उस दिन, मानों उसकी कोई परीक्षा कर रहा हो, उसको एक पैसा भी न मिला। आख़िर, उसके पास इतना पैसा भी न था कि घर मीठी रोटी ले जा सके।

श्री एम. के. मेघाणी

निरुत्साहित, निराश हो, जब वह घर वापिस लौट रहा था तो रास्ते में उसको एक मिठाई की दुकान मिली। वह आँसू बहाता, दुकान के बाहर खड़ा खड़ा अन्दर रखी तरह तरह की मीठी रोटियों को देखता रहा। दुकानदार ने उसको देखकर अन्दर बुलाकर पूछा—"क्यों यों रोनी-सी शक्ल बनाये खड़े हो?" मारूफ़ ने अपनी कहानी सुनाई।

"अरे! इस ज़रा-सी बात पर कोई आफ़त नहीं आ जायेगी! तेरी पत्नी को जो चाहिये, वह मैं दूँगा, जा ले जा। बाद में पैसे दे देना।" कहते हुए दुकानदार ने उसको एक मीठी रोटी दे दी। परन्तु उस पर चिपुड़ने के लिए उस समय उसके पास शहद न था। "शहद के बदले चासनी दूँगा। दोनों का एक ही तो स्वाद है। हमारे खरीददार दोनों को एक ही समझते हैं।" दुकानदार ने रोटी पर खूब चासनी पोत दी।

मारूफ़ ने उस दुकानदार को धन्यवाद दिया। रोटी लेकर वह घर गया। उसे देखते ही फातिमा ने पूछा—"रोटी लाये कि नहीं?" रोटी को देखकर उसने नाक सिकोड़ते हुए पूछा—"रोटी पर शहद डालकर लाने के लिए कहा था, तुम चासनी डालकर क्यों लाये? तुम समझते हो कि मैं दोनों में फ़र्क नहीं जानती हूँ?"

"अरे भला हो तेरा। इस बार इस तरह ही खाले। यह खरीदी भी नहीं है। दुकानदार ने उधार दी है। उसके पास शहद नहीं था। क्या करता?" पति ने हताश होकर कहा।

"मुझे कुछ नहीं चाहिये।" कहते हुए उसने रोटी को पति के मुँह पर फेंक दिया। "जा मेरे लिए शहद की रोटी

ला।" उसने उसके गाल पर चपत मारा। चपत इतने ज़ोर का लगा कि उसका एक दांत टूट गया और मुख से खून बहने लगा।

मारूफ़ और न सह सका उसने उसके सिर पर धीमे से मारा। तुरत फातिमा गुस्से में पागल-सी हो गई और अपने पति की दाढ़ी को खींचते हुए चिल्लाने लगी—"कौन है वहाँ, आओ, आओ, बचाओ। मेरा पति मुझे मार रहा है।"

यह चिल्लाना सुनकर, अड़ोस-पड़ोस के लोगों ने आकर मारूफ़ को पत्नी की पकड़ से छुड़ाया। जो कुछ गुज़रा था वह सुनकर उन लोगों ने उस चुड़ैल से कहा। "चासनी लगी रोटी में भला क्या ख़राबी है! क्या हम सब नहीं खा रहे हैं! क्यों इस बिचारे को यों तंग कर रही हो!"

सबके चले जाने के बाद, मारूफ़ रोटियों के टुकड़े जमा करके पत्नी को स्वाद चखने के लिए मनाने लगा। पर उसने उन्हें छुआ तक न। भूख लग ही रही थी, आख़िर उन्हें वह स्वयं खा गया।

रात भर वह पत्नी की डाँट डपट सुनता रहा। सवेरे वह मस्जिद में गया। वहाँ उसने खुदा से प्रार्थना की कि वह उसके कष्ट दूर करे। फिर वह वहाँ से सीधे अपनी दुकान में चला गया।

वह दुकान में बैठा ही था कि दो सिपाहियों ने आकर कहा—"तुझे काजी साहब ने बुलाया है।" वे उसे उठाकर ले गये। अदालत में काजी बैठा था और उसके सामने फातिमा खड़ी थी। उसके हाथ पर पट्टी बँधी थी और चेहरे पर खून के दाग थे।

काजी ने मारूफ़ को देखते ही पूछा—"क्या तुम खुदा से कतई नहीं डरते हो!

इस बिचारी का तुमने हाथ क्यों तोड़ा! दाँत क्यों तोड़े?" उसने उसे धमकाया।

कुछ देर तक उस मोची की अक्ल जाती रही। उसने काजी से सच्ची सच्ची बात कह दी। काजी को उसकी बात पर विश्वास भी होगया। उसने दीनार का चौथाई हिस्सा देते हुये उससे कहा—"यह लो, यह ले जाकर, अपनी पत्नी को शहदवाली रोटी खरीदकर दो। दोनों फिर कभी न लड़ना-झगड़ना। जाओ।"

मारूफ़ वह पैसा पत्नी को देकर दुकान पर चला गया। थोड़ी देर में सैनिकों ने आकर कहा—"तुम्हें आदलत ले गये थे इसलिये हमें इसका भत्ता दो।" उसे न सूझा कि क्या करे। उसने अपने औजार बेच कर उनको भत्ता दे दिया।

दुकान खाली हो गई। वह अपनी दुस्थिति पर रो-धो रहा था कि एक और अदालत के सिपाही ने आकर कहा—"काजी साहब तुम्हें बुला रहे हैं।"

वह उनके साथ अदालत गया। उसने वहाँ भी देखा कि उसकी पत्नी ने पहिले की तरह उसके विरुद्ध झूटी शिकायत कर रखी थी। उसने अपनी कहानी सुनाकर काजी से

कहा—"एक घंटा पहिले एक और काजी साहब ने हमारे झगड़े का फैसला कर दिया था।" काज़ी ने फातिमा पर गुस्सा किया और पूछा "क्यों ऐसी फरियाद लायी हो, जिसपर फैसला हो चुका है?"

"हुज़ूर! मेरे पति ने मुझे फिर पीटा है।" फातिमा ने कहा।

काज़ी ने उसे समझाया और कहा कि वह सिपाहियों को उनका भत्ता दे दे। इस कारण मारूफ़ की जेबें बिल्कुल खाली हो गईं। वह और दुखी हुआ। अपनी दुकान पर चला गया।

एक घंटे के बाद कुछ मित्र उसकी दुकान पर भागे भागे आये। "मारूफ़, आफ़त आ गई। तेरी पत्नी ने सुबेदार की अदालत में तेरी शिकायत की है। फौरन भाग जाओ।"

मारूफ़ ने तुरत दुकान बन्द कर दी और जल्दी कैरो नगर से बाहर भाग गया। वैसे तो सरदी के दिन थे तिस पर बारिश शुरु हो गई थी। वह वर्षा में भीगता, सरदी से काँपता अन्धेरा होने तक चलता रहा। फिर एक उजड़े मकान में पहुँचा। उसने रात वहीं काटी।

कोई मदद चाहते हो तो बताओ। आज तुम मेरे अतिथि हो।" भूत ने कहा।

"बाबू! अगर तुम कर सको तो मुझे कैरो नगर से अधिक से अधिक दूर ले जाओ। मेरी ज़िन्दगी अब बिगड़ गई है। नई जगह पर जाकर, फिर नये सिर से जिऊंगा।" मारूफ़ ने कहा।

"मेरी पीठ पर बैठो।" भूत ने कहा। मारूफ़ ने वही किया।

उसने आँखें बन्द करके खोली तो वह एक पर्वत के शिखर पर था। पूर्व में सूर्य उदय हो रहा था। पर्वत के नीचे एक बड़ा शहर था।

मारूफ़ जल्दी जल्दी पहाड़ पर से उतरा और उस नगर में पहुँचा। उसे वहाँ लोग नये दिखाई दिये। उसकी अजीब पोशाक देखकर वे उसके चारों ओर खड़े हो गये। उससे पूछने लगे— "तुम्हारा नाम क्या है? तुम किस देश के हो?"

"मेरा नाम मारूफ़ है। मैं कैरो शहर का रहनेवाला हूँ।" उसने जवाब दिया।

"तुम्हें कैरो से चले कितने दिन हो गये हैं?" उन्होंने फिर पूछा।

अपनी हालत देख कर वह रोया। ब्याही हुयी पत्नी ने ही उसको बेघर-बार कर दिया था। भविष्य के बारे में सोचता तो केवल अन्धेरा नज़र आता। इसलिये वह ज़ोर ज़ोर से रोने लगा।

इतने में उसने किसी को यह कहते सुना—"क्यों भाई, क्यों रो रहे हो?"

मारूफ़ ने सिर उठाकर किसी अजीब शक्ल को देखा। "तुम कौन हो?" उसने पूछा।

"मैं सौ साल से इस उजड़े घर में रहनेवाला भूत हूँ। अगर तुम मुझ से

“कल शाम को निकला था।” मारूफ़ ने कहा। सब ज़ोर से हँसे। एक सज्जन ने उससे कहा—“क्या तुम्हारी अक़्ल मारी गई है? कैरो से इस खतान नगर तक का रास्ता पूरे एक साल का है। तू कल क्या निकला कि अभी पहुँच भी गया है? जा बे जा।”

“मैं पैदल नहीं आया हूँ। एक भूत, मुझे अपनी पीठ पर बिठाकर यहाँ लाया, और यहाँ छोड़ कर चला गया।” मारूफ़ ने कहा।

यह सुनते ही, जमा हुये लोग और भी हँसने लगे। “पागल है।” सब उसके पीछे पड़ गये। उस समय एक महानुभाव वहाँ भगवान की तरह आया। वह उस शहर के बड़े व्यापारियों में से एक था। “क्या किसी परदेशी को इस तरह तंग कर सकते हैं? तुम सब क्या कर रहे हो?” उसने वहाँ जमा हुये लोगों को फटकारा, और उनको चीरता हुआ मारूफ़ के पास पहुँच गया। वह उसको अपने घर मेहमान बनाकर ले गया। उसकी खूब आवभगत की।

मारूफ़ नहाया धोया। उसके दिये हुये कीमती कपड़े पहने। पेट भर खाना खाने के बाद उस व्यापारी ने कहा—“आपकी पोशाक देखकर लगता है कि आप मिश्र के रहनेवाले हैं। आप कहाँ के रहनेवाले हैं?

“जी हाँ! मैं मिश्र का ही हूँ। कैरो में मैं रहता हूँ।” मारूफ़ ने कहा।

“वहाँ आप क्या करते थे?” व्यापारी ने पूछा।

“पुरानी चप्पलों की मरम्मत किया करता था।” मारूफ़ ने कहा।

“कैरो में आपका घर कहाँ है?” व्यापारी ने पूछा।

“लाल गली में।” तुरत मारूफ़ ने जवाब दिया।

"उस गली में रहनेवाले किसी को आप जानते हैं?" व्यापारी ने पूछा। मारूफ़ न कुछ नाम बताये।

"शेख़ अहमद नाम के इत्र के व्यापारी को जानते हैं?" व्यापारी ने पूछा।

"क्यों नहीं जानता! हम दोनों का घर एक साथ लगा है।" मारूफ़ ने हँसते हुए कहा।

"उनका क्या हाल-चाल है?

"अल्लाह की मेहरबानी से ठीक ही है।" मारूफ़ ने कहा।

"अब उनके कितने लड़के हैं?"

"तीन! मुस्ताफ़ा, मुहम्मद और अलि।"

"वे क्या काम कर रहे हैं?"

"बड़ा लड़का मुस्ताफ़ा मदरसे में पढ़ाता है। दूसरा बाप की तरह इत्र का व्यापार करता है। उसकी दुकान भी पिता की बग़ल में है। तीसरा अलि.... हम दोनों छुटपन में साथ खेला करते थे। हम दोनों गिरजे में घुस जाते, वहाँ से किताबें चुराते, और उन्हें बेच बाच कर मिठाई खरीदते। एक दिन हमें गिरजा वालों ने पकड़ लिया। शेख़ अहमद ने

अपने लड़के को खूब पीटा। वह घर से चम्पत हो गया। पिछले बीस सालों से उसका कोई पता नहीं है।"

मारूफ़ के यह कहते ही व्यापारी ने उठकर उसको गले लगाकर कहा—"मारूफ़! मैं ही वह अलि हूँ।"

फिर मारूफ़ ने अपना सारा किस्सा अपने दोस्त को सुनाया। सब सुनकर अली ने कहा—"देख भाई! अगर लोगों को यह मालूम हो गया कि तुम पेट के लिए मोची का काम करते थे और पत्नी से डर कर भाग आये हो, तो तुम्हारी कोई ख़ातिर न करेगा। अगर तुमने कहा कि तुम एक दिन में ही कैरो से यहाँ पहुँच गये हो, तो सब हँसेंगे। जब सच कहने की ज़रूरत न हो, तो ठीक तरह झूट कहने में ही अक़्लमन्दी है। तुम नहीं जानते मैं इस शहर में आकर क्या क्या कारनामें करके बड़ा हुआ हूँ।"

"तो तुम मुझे क्या करने के लिए कहते हो?"

"मैं बताता हूँ। सुन। कल सवेरे मेरे खच्चरों में से एक अच्छा खच्चर चुनकर, सवार हो बाजार आओ। अपने साथ मेरे घर

का एक गुलाम भी लेते आना। वहाँ मैं और कुछ बड़े व्यापारी बैठे हुए होंगे। तुम्हें देखते ही मैं बड़े अदब से उठकर तुम्हारी आगवानी करूँगा। मैं यह कहकर कि तू कैरो नगर का सबसे बड़ा व्यापारी है, तुम्हारा उनको परिचय दूँगा। अगर कोई भिखारी आये तो उन्हें खूब खैरात देना। उसके लिए मैं तुम्हें अभी कुछ पैसा देता हूँ। तब मैं तुम से पूछूँगा—"क्या फलाना माल है!" कहना कि खूब है। यह देखने के बाद, वे व्यापारी तुम से व्यापार करना चाहेंगें। उनकी मदद से तुम सचमुच बड़े व्यापारी बन सकते हो। मैं इसी तरह व्यापारी बना था।" अलि ने कहा।

अगले दिन, अलि अपने दोस्त को कीमती पोशाक और हज़ार सोने की दीनारें देकर बाजार चला गया। उसके कहे मुताबिक, मारूफ़ एक खच्चर पर सवार होकर, एक गुलाम को लेकर, बाज़ार गया। वहाँ उसको अलि के साथ खतान के बड़े बड़े व्यापारी बैठे दिखाई दिये।

उसे देखते ही, अलि झट उतरा, सामने जाकर उसने उसके पैर छुये। उसको खच्चर पर से उतारा, और लाकर व्यापारियों के बीच में बिठाया।

बाकी व्यापारीयों ने एक एक करके अलि के कान में पूछा—"ये कौन हैं!"

"मिश्र में इनसे बड़ा कोई व्यापारी नहीं है। इन के बाप दादाओं के ऐशो आराम के बारे में तरह तरह की कहानियाँ कही सुनी जाती हैं। प्रायः हर देश में इनकी दुकानें हैं। उनके मुकाबले में हम निरे पन्सारी से हैं।" अलि ने उनको बताया।

यह सुनकर वे व्यापारी, एक से एक बढ़कर उसकी आवभगत करने लगे। खूब

इज़्ज़त करके उसको शरबत वग़ैरह, पिलाये। एक बड़े व्यापारी ने उसके पास आकर पूछा—"क्या आप अपने साथ कुछ हरा रेशम लाये हैं ?"

"ढ़ेर का ढ़ेर" मारूफ़ ने कहा।

"और लाल।" एक और बड़े व्यापारी ने पूछा।

"ढ़ेर का ढ़ेर" मारूफ़ ने कहा।

बाकी व्यापारियों ने जिस किसी माल के बारे में पूछा, उसने "ढ़ेर का ढ़ेर" जवाब दिया।

"क्या मेहरबानी करके आप माल दिखा सकेंगे ?" व्यापारियों ने पूछा।

"ज़रूर दिखाऊँगा। माल आने दीजिये। हज़ारों खच्चरों वाला हमारा काफ़ला कुछ दिनों में ही इस शहर में पहुँच रहा है।" मारूफ़ ने कहा।

जब यों बातचीत चल रही थी तो एक भिखारी ने आकर व्यापारियों के सामने हाथ पसारे। तुरत मारूफ़ ने जेब से मुट्ठी भर सोने की मुहरें निकाल कर उसके हाथ में डाल दीं। यह देख बाकी व्यापारी भौंचक्के रह गये। "यह आदमी राजाओं से भी अधिक रईस मालूम होता है।" उन्होंने आपस में सोचा।

थोड़ी देर बाद, एक भिखारी ने आकर भीख मांगी। उसको भी मारूफ़ ने मुट्ठी भर सोना दिया। उसने जाकर और भिखारियों को बताया। वे एक झुण्ड बनाकर वहाँ आये।

बिना आगे पीछे देखे जितना सोना उसके पास था वह सब उसने भिखारियों को दे दिया। जेबें खाली होने के बाद उसने कहा—"अगर मुझे मालूम होता कि इस शहर में इतने भिखारी हैं और सोना साथ ले आता।

"आप फ़िक्र न कीजिये....अगर आपको ज़रूरत हो तो हम दे देंगे।" एक बड़े व्यापारी ने कहा।

देखते-देखते मारूफ़ के हाथ में हज़ार और दीनारें आ गईं, वह दुपहर की नमाज़ तक उन्हें बाँटता रहा। और बाकी को मस्जिद में नमाज पढ़ने वालों के सामने उसने फेंक दिये। नमाज के बाद उसने एक हज़ार दीनारें और कर्ज़ में ली और उन्हें भी बाँट दिया। शाम तक....उसने व्यापारियों से पाँच हज़ार दीनारें उधार लेकर लोगों में दान कर दिया।

उसका दान देख कर आश्चर्य करते हुए लोगों को देखकर उसने कहा—"मेरा काफ़ला आने दीजिए—आप चाहेंगे तो आपका कर्ज़ सोने में चुका दूँगा....नहीं तो माल के रूप में दे दूँगा।"

उस दिन अलि ने व्यापारियों को दावत दी। उन में मारूफ़ मुख्य अतिथि था। उसको ऊँचे आसन पर बिठाया गया। वह रात भर रेशमी थानों के और जेवर-जवाहरातों के बारें में बातचीत करता रहा। अगर कोई बीच में पूछ बैठता—"क्या आपके काफ़ले में फ़लानी चीज़ आ रही है!" तो वह जवाब देता—"ढेर के ढेर।"

अगले दिन वह फिर बाज़ार गया। व्यापारियों से कर्ज़ लेकर, भिखारियों को बाँटता इस तरह वह बीस दिन तक दान-पुण्य करता रहा। तब तक वह वहाँ के व्यापारियों से साठ हजार दीनारें उधार ले चुका था। और उसके काफ़ले का कहीं पता न था।

(अगले अंक में समाप्त)

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जनवरी १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५, नवम्बर '५७ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

नवम्बर - प्रतियोगिता - फल

नवम्बर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो:
गिर न जाय

दूसरा फ़ोटो:
जरा सम्भलकर

प्रेषक : पुष्पा बोथरा,
C/O श्री. जी. सी. भरीवाल, ८ इन्डिया एक्स्चेन्ज पेलेस, कलकत्ता.

समाचार वगैरह

भारत की द्वितीय पंच वर्षीय योजना में फिलहाल काफी रद्दो बदल हो रही है पर इसके आधारभूत आवश्यकताओं में कोई परिवर्तन नहीं किये गये हैं।

इस रद्दो बदल का कारण विदेशी विनिमय की कमी बताई जा रही है। विनिमय की कमी के कारण भारत और देशों से आवश्यक यन्त्र नहीं मँगा सकता।

इस कमी को पूरा करने के लिए भारत और देशों से उधार लेने का प्रयत्न कर रहा है।

अलहाबाद की पोलीस ने एक चलता फिरता जत्था बनाया है, जो "जन सेवक" नाम से काम करेगा।

यह जत्था घर घर जायेगा, और लोगों को हर तरह की मदद देने की कोशिश करेगा। अकेली, निस्सहाय औरतों को चिकित्सा आदि की सहायता देना, इसके कार्यक्रम का प्रधान अंग है।

* * *

पिछले दिनों आन्ध्र में यह अध्यादेश जारी किया गया कि जो २० एकड़ से अधिक भूमि के मालिक हैं,

वे अपनी भूमि के बारे में, ९० दिनों में पूरी जानकारी सरकार को दें।

यह भूमि-सुधार की भूमिका, बताई जा रही है। केरल व अन्य राज्यों में भूमि-सुधार के लिये आवश्यक योजनायें बनाई जा रही हैं।

* * *

बम्बई में, अन्धो के लिए एक बाग बनाया जा रहा है। पौधों की टहनियों पर "ब्रेली...." भाषा में, पौधों के नाम वगैरह के बारे में, जानकारी एक कागज़ पर नत्थी की जायेगी। इस बाग में, अधिक सुगन्धी वाले पुष्पों के पौधे ही रखे जा रहे हैं।

यह अपने ढंग का भारत में पहिला बाग है।

* * *

दक्षिण के कुछ लोक सभा के प्रतिनिधियों ने यह सुझाव पेश किया है कि हिन्दी को १९९० तक राज भाषा न बनाया जाये।

दक्षिण के कई शहरों में हिन्दी के विरुद्ध जलूस भी निकाले गये।

* * *

केन्द्रीय सरकार ने हिन्दी पारिभाषिक शब्दों की सूची बनाई है। सभी विषयों के पारिभाषिक शब्दों को एकत्र किया गया है, और उनका निर्माण भी किया गया है।

हिन्दी के प्रचार के लिए कई योजनायें कार्यान्वित की जा रही है। जिनमें अहिन्दी प्रान्तो में, हिन्दी के विद्यार्थियों को छात्रवृति देने की भी योजना है।

उत्तर के कई विश्वविद्यालयों में, हिन्दी के माध्यम में पठन पाठन प्रारम्भ हो गया है।

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास को पौधों को पानी देने का काम पड़ा। जब वे दोनों होज लेकर पानी दे रहे थे, तब उनका दोस्त गोली लेकर आया। दास और वास अपना काम छोड़कर गोली खेलने चले गये। "टाइगर" ने यह देखा। वह मुँह में होज पकड़कर उस जगह गया, जहाँ वे गोली खेल रहे थे। और उन पर पानी छोड़ दिया। उनके कपड़े भीग गये। और उन्होंने सोचा कि शायद "टाइगर" को यह न मालूम था कि पानी कहाँ छोड़ा जाये।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press(Private) Ltd., and Published by him for

THE CHOICE
Pencils

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्थाओं को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्पष्टतम कार्य-निपुणता, आकर्षक मुद्रण और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
★
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
★
दि बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलिफ़ोन :
८८८५१-३ लइन्स

वीर
मुन्नू
और
गप्पी
चुन्नू

अगर तुम कहते हो तो सच नहीं होगा!
नहीं, सुबह चार बजे का सपना जरूर सच होता है!

मैं ने सपने में देखा कि हम दोनों ने विलायती टोपी सा एक हवाई जहाज़ देखा!...

...हम अंदर गये तो वहाँ छः हाथों वाले लोग थे जो दो हाथों पर चलते थे...

फ़ौरन ही हवाई जहाज़ फुर्रर्रर्र से आकाश में उड़ गया!

हम मंगल लोक में आ कर उतरे और वहाँ के लोग हमें वहाँ के राजा के पास ले गये।

हम यह नहीं कहते,
हम उत्तमोत्तम हैं
पर
निम्न वस्तुओं में हम
उत्तमोत्तम
कार्य कर दिखायेंगे :
पोस्टर्स
कैलेंडर्स
कार्टून्स
लेबिल्स
बुकलेट्स
फोल्डर्स
आफ़सेट प्रिंटिंग के सभी काम
उत्तम छपाई का चिह्न ...

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत

...ज़रा सम्भलकर !

प्रेषिका :

CHANDAMAMA (Hindi) DEEPAVALI NUMBER 1957 Regd. No. M. 5452